तृतीय अध्याय
भवानीप्रसाद मिश्र की कविता में गांधीवादी सामाजिक-राजनैतिक दर्शन

धार्मिक साधक एवं कर्मयोगी महात्मा गांधी विख्यात समाज सुधारक या राजनीतिक सिद्धांतवेता नहीं थे। पर भरतीय समाज के पुनर्निमाण में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। राजनीति में उन्होंने साधनों की पवित्रता और नैतिकता को बनाये रखने पर बल दिया। उनके सामाजिक सिद्धान्त मनुष्य की मूलभूत एकता पर आधारित है। भारतीय समाज में व्याप्त रूढ़ियों को उन्होंने कभी स्वीकार नहीं किया। मध्ययुगीन रीति-रिवाजों का विरोध और अस्पृश्यता उन्मूलन उनके समाज सुधार के कार्यों में प्रमुख है। उन्होंने सामाजिक विषमता को समन्वयात्मक दृष्टिकोण से दूर करने का प्रयास किया। भारतीय समाज में आमूल परिवर्तन कर वे एक ऐसे समाज की स्थापना करना चाहते थे, जिसमें प्रेम और साम्प्रदायिक सौहार्द तो हो पर अस्पृश्यता और स्त्री-पुरुषों में असमानता न हो।

राजनीति का शुद्धिकरण राजनीतिशास्त्र को महात्मा गांधी की स्थायी देन है। वे राजनीति को साम्प्रदायिकता और वर्गभेद की सीमाओं से मुक्त कराना चाहते थे। नैतिकता पर आधारित इस राजनीति में संकीर्ण राष्ट्रीयता के लिए कोई स्थान नहीं है। महात्मा गांधी आजीवन स्वार्थ केन्द्रित राजनीति को कर्ममय और शुद्ध बनाने का प्रयास करते रहे। स्वतंत्रता संग्राम में साधनों की पवित्रता, पंचायती राज व्यवस्था, सर्वोदय तथा रामराज्य की कल्पना राजनीति को उनकी देन है।

भवानीप्रसाद मिश्र महात्मा गांधी के उन गिने-चुने अनुयायियों में से हैं, जिन्होंने ईमानदारी से गांधीवाद को अपनाया। गांधी और उनके दर्शन के प्रति आस्था उनकी कविताओं का महत्त्वपूर्ण स्वर है। गांधीवादी सामाजिक राजनीतिक दर्शन रूढ़िवादिता, अस्पृश्यता, धर्म से वंचित स्वार्थकेन्द्रित राजनीति से त्रस्त भारत के लिए अचूक मरहम है, जिसका प्रयोग भवानीप्रसाद मिश्र ने महात्मा गांधी के बताये रास्ते पर चलकर भारत की सामाजिक राजनीतिक स्थिति को सुधारने के लिए किया है। गांधीवादी विचारधारा को समर्पित भवानीप्रसाद मिश्र की कविताओं में जहाँ कहीं भी रूढ़िवादिता, छुआछूत, स्वतंत्रता आन्दोलन, पंचायती राज, सर्वोदय और रामराज्य के सम्बन्ध में टीका-टिप्पणी हुई है, वहाँ गांधीवादी सामाजिक राजनीतिक दर्शन स्वतः उभरकर सामने आ गया है।

(क) रूढ़ि-विरोध :

जब कुप्रथाएँ दृढ़ हो जाती हैं और समाज उनका अंधविश्वास से पालन करने लगता है, तब उसे रूढ़ि की संज्ञा दी जाती है। अर्थात् अंधविश्वास से युक्त विधि-विधान की क्रियाएँ रूढ़ियाँ कहलाती हैं। आधुनिक युग में धर्म के नाम पर पनपी रूढ़ियों को दूर करने के प्रयास हुए। "रूढ़ियाँ जड़ परम्परा की वाहक हैं। उनके अनुपालन से गौरवबोध करना विवेकशीलता नहीं, कायरता है। समाज की जड़ परम्पराएँ विकास को अवरुद्ध करती हैं और रूढ़िवाद तथा कट्टरपंथ को बढ़ावा देती है।"[1] गांधीजी मूलतः धार्मिक थे। परन्तु धर्म के सम्बन्ध में उनका दृष्टिकोण व्यापक तथा उदार था। उनकी दृष्टि में धर्म व्यक्ति के अस्तित्व से जुड़ा है। धर्म से उनका आशय केवल प्रचलित धार्मिक नियमों एवं परम्पराओं से नहीं था। यद्यपि वे स्वयं को कट्टर सनातनी हिन्दू मानते थे तथापि उनका सनातन धर्म कुंठित नहीं था। उनकी धार्मिक भावना रूढ़िवाद का विरोध करने वाली थी। धार्मिक असहिष्णुता और कट्टरता की कड़ी आलोचना करते हुए उन्होंने हिन्दू धर्म के उन स्वयं घोषित संरक्षकों रूढ़िवादी तथा प्रतिक्रियावादी पंडितों की सत्ता को चुनौती दी जो धार्मिक अंधानुकरण और कर्मकाण्ड को न्याय संगत मानते थे। समाज सुधारक के रूप में वैसे तो महात्मा गांधी ने लगभग सभी सामाजिक कुप्रथाओं और परम्पराओं का विरोध किया। परन्तु छुआछूत, व्रत-उपवास तथा नारी जीवन सम्बन्धी रूढ़ियों का उन्होंने सक्रिय रूप से विरोध किया था।

भवानीप्रसाद मिश्र ने अपनी कविताओं में धर्म के उपयोगी स्वरूप को चिह्नित किया और धर्म तथा समाज में व्याप्त जड़ता तथा रूढ़िवादिता का विरोध किया। वर्तमान समाज में रूढ़िवादिता बलपूर्वक सिर उठाए घुम रही है जिससे सामाजिक विकास का मार्ग अवरुद्ध हो रहा है। इन रूढ़ियों का समर्थन या पालन करना जीवन में जड़ता को आमंत्रित करना है। भवानीप्रसाद मिश्र की कविताएँ इन रूढ़ियों पर तीखी टिप्पणी है। कवि की दृष्टि जहाँ जाती है वहीं उन्हें अंधविश्वासी और रूढ़िग्रस्त लोग दिखाई पड़ते हैं, जो पुरानी सड़ी-गली मान्यताओं को आधार मानकर अपने वर्तमान को नष्ट कर रहें हैं। कहीं नई कल्पना या नई सोच दृष्टिगत नहीं होती। चारों तरफ पुरानी परम्पराओं और अंधविश्वासों का ही बोलबाला है। अगर कोई आगे बढ़कर कुछ नया या अलग करना भी चाहता है, तो उस पर भी रूढ़ियों और अंधविश्वासों का साया मंडराने लगता है। अर्थात् लोग चाहकर भी इनसे मुक्त नहीं हो पाते हैं –

"जहाँ जाइए वहीं विगत की छाया

संकेतों पर नचा रही है वर्तमान को भूतकाल की छाया
यहाँ आदमी नहीं रूढ़ियाँ हैं
कहीं कल्पना तरुण नहीं मिलती
विधि निषेध की हर देहरी पर बड़ी-बूढ़ियाँ हैं
भय और निराशा के शिशु अक्सर तो क्रन्दन करते हैं
और अगर कुछ भिन्न किया भी तो छायानर्तन करते हैं"[2]

भवानीप्रसाद मिश्र के मन में यह आशंका है कि अगर यही स्थिति रही तो रूढ़ियाँ और अंधविश्वास कैसे दूर होंगे, पुरातन परंपरा को मानकर चलने वाले लोग कैसे आगे बढ़ेंगे। अपने संदेह को अभिव्यक्त करते हुए वे कहते हैं कि अगर कभी सुबह होगी तो शायद वह भी काली ही होगी। यथा -

"यदि आयेंगे कभी भोर तो वे भी काले होंगे

छाया पुरुष उजाला पीकर क्या उजियाले होंगे"[3]

अतः इन पुरातन परम्पराओं, रूढ़ियों और अंधविश्वासों से मुक्त होना आवश्यक है। महात्मा गांधी जहाँ एक ओर पैगम्बरों अथवा अवतारों के प्रति आस्था जैसे अंधविश्वासों को जीवन में आवश्यक मानते हैं वहीं सामाजिक और जीर्ण बंधनों को वे क्षणभर के लिए भी सहन करने को तैयार नहीं हैं। उनके जीवन और दर्शन को अपनी कविता में उतारने वाले भवानीप्रसाद मिश्र इस बात को ज्यों का त्यों स्वीकार करते हैं। वे चाहते हैं कि मनुष्य को इन बंधनों से मुक्ति मिले ताकि वह विकास के पथ पर अग्रसर हो। 'मधुमास' शीर्षक कविता में वे स्पष्ट कहते हैं –

"जीर्ण बंधनों की महिमा का मोह मैं न क्षण भर सह पाऊँ,

रोज लड़ रहे और बढ़ रहे मानव की आशा को समझूँ।"[4]

वर्णाश्रम धर्म के समर्थक होने के बावजूद महात्मा गांधी छुआछूत की हिन्दू रूढ़ि के घोर विरोधी थे। छुआछूत धर्म के नाम पर मनुष्य को उत्पीड़ित करने वाली कट्टर हठधर्मिता के अलावा कुछ नहीं है। छुआछूत के प्रति अपने विचारों को व्यक्त करते हुए उन्होंने यहाँ तक कहा है – "अगर छुआछूत कायम रहती है तो हिन्दू धर्म को खत्म हो जाना चाहिए।"[5] जिस क्षण छुआछूत का उन्मूलन होगा उस दिन जाति-व्यवस्था स्वयं शुद्ध हो जाएगी। अर्थात् समाज में रहने वाले सभी लोग परस्पर पूरक होंगे। कोई किसी से श्रेष्ठ अथवा हीन नहीं होगा। तुकाराम, दादूदयाल, कबीर, कणप्पा और नानक जैसे प्राचीन संतो ने भी हमें जात-पाँत और छुआछूत की रूढ़ियों का विरोध करते हुए समानता का यही संदेश दिया है कि सभी मानव समान हैं। जात-पाँत और छुआछूत की इन्हीं रूढ़ियों का

विरोध करते हुए महात्मा गांधी के स्वर में स्वर मिलाते हुए 'गांधी का सपना' शीर्षक कविता में भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं -

"पिछले सौ बरसों में कितने संत सुधारक
तुकाराम दादू कबीर कणप्पा नानक
हमें सिखाने आये सब मानव समान हैं
सब छोटे हैं सब महान हैं।"[6]

छुआछूत और जात-पाँत की पारम्परिक रूढ़ि को महात्मा गांधी की भाँति कवि भवानीप्रसाद मिश्र भी हिन्दू धर्म के माथे पर लगा कलंक मानते थे। यही कारण है कि वे इस छूत की चुड़ैल को उतारने लिए स्वयं मर-मिटने के लिए तत्पर हैं –

"मगर साफ यह बात हमारे गले न उतरी
हम पर चढ़ी चुड़ैल छूत की, भले न उतरी
लेकिन अब तो हमें होश में आना होगा
और नहीं तो मिटना और मर जाना होगा"[7]

हालाँकि महात्मा गांधी जात-पाँत और छुआछूत के विरोधी थे पर वर्ण व्यवस्था के वे समर्थक थे। उनके अनुसार वर्ण का यह नियम मनुष्य-मनुष्य के बीच की स्वाभाविक सीमाओं को तो मानता है पर उनमें ऊँच-नीच के भेद को स्वीकार नहीं करता। गांधीजी को पूर्ण विश्वास था कि आदर्श समाज व्यवस्था का विकास तभी संभव होगा जब इस वर्ण नियम के रहस्यों को पूरी तरह समझ कर उन्हें कार्यान्वित किया जायेगा। गांधी के इन विचारों का स्पष्ट प्रभाव भवानीप्रसाद मिश्र की कविताओं में परिलक्षित होता है। वे रूढ़ विगत के घेरों को तोड़ने की बात तो करते हैं पर वर्ण व्यवस्था जैसी रूढ़ियों को प्राणों की ओट देकर भी संजोकर रखना चाहते हैं –

"रूढ़ विगत के घेरे तोड़ो किंतु विभा उनकी मत बुझाओ
लाओ रूढ़ को वर्तमान तक ओट देकर अपने प्राणों की"[8]

धार्मिक परम्पराओं के नाम पर मूक जानवरों की बलि देने की परम्परा भी हमारे देश में सदियों से चली आ रही है। अहिंसा को जीवन का मूलमंत्र मानने वाले महात्मा गांधी ने देवताओं के नाम पर पशुवध की इस परम्परा का विरोध किया। महात्मा गांधी के स्वर में स्वर मिलाते हुए उनके अनुयायी भवानीप्रसाद मिश्र ने अपनी कविता में गांधी विचारों को अभिव्यक्त करते हुए कहा –

"बकरे की हत्या से यदि प्रसन्न होती है माई

तब तो ऐसा करें कि बढ़कर इससे कोई प्राणी खोजें
माँ पर उसकी बलि दे भाई!"[9]

'यंग इंडिया', 'हरिजन' एवं 'नवजीवन' पत्रिकाओं के माध्यम से महात्मा गांधी नारी जीवन की समस्याओं और उससे सम्बन्धित रुढ़ियों की ओर जन सामान्य का ध्यान आकर्षित करते रहे हैं। भारत की पुरुष प्रधान संस्कृति ने अपने स्वार्थों के लिए नारी को घर की चारदीवारी में कैद कर दिया। नारी के विकास में बाधक सामाजिक प्रथाओं और पारम्परिक रूढ़ियों का महात्मा गांधी ने कड़ा विरोध किया। उन्होंने नारी उद्धार के लिए बाल-विवाह, अनमेल विवाह, सती प्रथा, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा आदि के विरुद्ध दृढ़ता से आवाज उठायी।

पर्दा प्रथा नारी जीवन से सम्बन्धित प्राचीन रूढ़ियों में से एक है जो पुरुष की मानसिक अस्वस्थता की सूचक है। इस रूढ़ि का विरोध करते हुए महात्मा गांधी ने लिखा है – "पवित्रता स्त्रियों को बाहरी मर्यादाओं में जकड़कर रखने से उत्पन्न होने वाली चीज नहीं है। उसकी रक्षा उन्हें पर्दे की दीवार से घेरकर नहीं की जा सकती। उसकी उत्पत्ति और उसका विकास भीतर से होना चाहिए।"[10] नारी उद्धार से सम्बन्धित महात्मा गांधी के रूढ़ि विरोधी विचारों का भवानीप्रसाद मिश्र पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। भारतीय समाज में नारी की स्थिति को देखकर वे चिन्तित थे। नारी जीवन को इन रूढ़ियों से छुटकारा दिलाकर वे उसे एक नयी दिशा देना चाहते थे। पर वे भारतीय नारी को भारतीयता के स्वरूप से अलग नहीं करना चाहते थे। यही कारण है कि पर्दा प्रथा जैसी रूढ़ि का विरोध करती हुई भी उनकी 'प्रजातंत्र' शीर्षक कविता में वर्णित नारी पूर्ण भारतीय नारी है –

"रूढ़ियों से सजी हुई वह रूढ़ियाँ तोड़ रही है
मजाक नहीं है बँधे-बँधाये जिस बगीचे में
पली बढ़ी थी वह उसे छोड़ रही है
x x x x
उसने भी पहने है घूँघट उसने भी डाला है वैसा ही
मगर फिर भी
उसके गहने उसकी चूड़ियाँ उसका घूँघट अलग है।"[11]

पर्दा प्रथा की तरह नारी जीवन की त्रासदी का एक महत्त्वपूर्ण कारण दहेज प्रथा है। महात्मा गांधी चाहते थे कि यह कुप्रथा समाप्त हो। अगर कोई इस प्रथा का समर्थन करता है तो वह अपने देश को कलंकित करने के साथ-साथ नारी जाति का भी अपमान करता है। दहेज प्रथा के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए महात्मा गांधी ने कहा है – "दहेज की

इस नीचे गिराने वाली प्रथा के खिलाफ बलवान लोकमत पैदा करना चाहिए; और जो युवक इस पाप के सोने से अपने हाथ गंदे करते हैं; उनका समाज से बहिष्कार किया जाना चाहिए।"[12] इस दहेज प्रथा के चलते नारी जीवन दुभर हो रहा है। महँगाई के जीवन में दहेज के अभाव में जब लड़की के लिए अच्छा वर नहीं मिलता तो लड़की या तो आत्महत्या कर लेती है या अनब्याही रह जाती है। और कभी-कभी ससुराल पक्ष द्वारा प्रताड़ित करने के पश्चात उसकी हत्या कर दी जाती है। भवानीप्रसाद मिश्र ने नारी जीवन सम्बन्धी इस रूढ़ि को भली-भाँति जाना है। यही कारण है कि मेहंदी लगाकर मंडप में बैठने के बावजूद दहेज के अभाव में अपने वैवाहिक जीवन को लेकर आशंकित दुलहन का वर्णन करते हुए कवि लिखते हैं –

"गलता का लहँगा पहने
ऐसे में बैठे हो तुम मेहंदी लगा रखी है पाँव में
जीवन से अब छाँव में आँखें चार करने की आस बेअकली है,
इसलिए कहता हूँ तुम्हारा बुरा हाल है।"[13]

भारतीय समाज की जड़ता यह मानकर चलती है कि सामाजिक नैतिकता और मर्यादा को निभाने की जिम्मेदारी केवल स्त्रियों की ही है। समाज की इस रूढ़िवादी सोच ने स्त्री को वस्तु में परिणत कर दिया है। आज शराब के नशे में व्यक्ति अपनी अर्धांगिनी को महज एक वस्तु मानता है। नारी के प्रति समाज की सोच को अंकित करते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"जैसे तूफान थम जाने के बाद समुद्र सोचता है
अपने पानी की उथल-पुथल और उसकी खराबी
या जैसे नशा उतर जाने के बाद
पत्नी को सोचता है शराबी।"[14]

कानून और रूढ़ि के जुल्मों ने स्त्री को लगातार कुचलते हुए उसे उसके समस्त अधिकारों से वंचित कर दिया। इस पर चिंतन करते हुए महात्मा गांधी ने लिखा है – "अहिंसा की नींव पर रचे गए जीवन की योजना में जितना और जैसा अधिकार पुरुष को अपने भविष्य की रचना का है, उतना और वैसा अधिकार स्त्री को भी अपना भविष्य तय करने का है।"[15] स्त्री-पुरुष सम्बन्ध गांधी की चिंता का महत्त्वपूर्ण क्षेत्र था। समाज की कुछ पुरानी मान्यताओं के अनुसार स्त्री, सिर्फ पुरुष के उपयोग के लिए बनाई गई है, वह बच्चे पैदा करने की एक मशीन है। इस मामले में महात्मा गांधी की दृष्टि अलग थी। उन्होंने

समाज में स्त्री और पुरुष के भेद को स्वीकार नहीं किया। उनके अनुसार समाज में विकास के लिए दोनों को समान अवसर मिलना चाहिए। स्त्री-पूरुष सम्बन्धों को लेकर शताब्दियों से चले आ रहे परस्पर विरोधी विचार और रूढ़ियों के सन्दर्भ में भवानीप्रसाद मिश्र गांधी के विचारों को व्यावहारिक बताते हुए उन पर ध्यान देने की बात करते हैं। पुरुष प्रधान समाज में कठपुतली बन कर जीवन व्यतीत कर रही नारी को इन रूढ़ियों और बन्धनों से मुक्ति दिलाने के लिए भवानीप्रसाद मिश्र 'कठपुतली' कविता में कठपुतली के माध्यम से विद्रोह का बिगुल फूँकते हुए कहते हैं –

"कठपुतली गुस्से से उबली
बोली – ये धागे क्यों है मेरे पीछे – आगे ?
इन्हें तोड़ दो; मुझे मेरे पाँवों पर छोड़ दो"[16]

महात्मा गांधी नर-नारी के समता-सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप देना चाहते थे। उनकी धारणा थी कि प्रकृति भेद होने के कारण स्त्री-पुरुषों के कार्य में अन्तर अवश्य होता है पर इसके बावजूद दोनों की समान प्रतिष्ठा एवं महत्त्व है। स्त्री को निम्न स्तर की मानने वालों को वे कहते हैं – "पुरूषों की अपेक्षा स्त्री का दर्जा और अधिकार कम है, इस संस्कार को निर्मूल कर देना चाहिए।"[17] गांधी के इन्हीं विचारों को कविता के माध्यम से स्पष्ट करते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"शौर्य केवल पुरुष की थाती नहीं है
कौन-बल है
सहज नारी जिसे पाती नहीं है।"[18]

महात्मा गांधी ने भारतीय जनजीवन और समाज में प्रचलित सभी रूढ़ियों की आलोचना करते हुए उनका कड़ा विरोध किया। भारतीय समाज की दुर्दशा और पराधीनता इन सामाजिक रूढ़ियों के मौन समर्थन का ही परिणाम है।भवानीप्रसाद मिश्र कविता के माध्यम से इन विचारों को अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं –

"सिसक रही है जहाँ-तहाँ हुंकार मूक रहने से तेरे
जगह-जगह पर रूढ़ि पड़ी है प्रबल प्राण पौरुष को घेरे
तु ही बोला नहीं तभी तो मंदिर का यह दीप बुझ गया
तु ही बोला नहीं तभी तो माता का सिंदूर पुंछ गया।"[19]

समाज में व्याप्त विविध दोषों के मूल में रूढ़ियों एवं परम्पराओं के प्रति एक विशिष्ट आकर्षण होता है। महात्मा गांधी ने इन्हें नष्ट करने का बीड़ा उठाया था। भवानीप्रसाद मिश्र

को भी विश्वास था कि स्वस्थ सामाजिक प्रगति के लिए रूढ़ियों तथा अंधविश्वासों को जड़ से उखाड़ फेंकना होगा। इसीलिए कट्टरता की भावना को बढ़ावा देने वाले साँचे और ढाँचे को तोड़ने का आह्वान करते हुए वे कहते हैं –

"साँचे जो विचार की गुंजाइश नहीं छोड़ते
सिर्फ ढालते हैं एकरूप कट्टरता तोड़े जाने चाहिए
ढाँचे जो जकड़ते हैं आत्मा को अपनी भी
छोड़े जाने चाहिए।"[20]

कवि भवानीप्रसाद मिश्र अपनी अनेक कविताओं में जटिल रूढ़ियों के भंजन का आह्वान करते हैं। 'ज्वलंत शब्द' शीर्षक कविता में वे उन तमाम गयी-गुजरी बातों और तरीकों को शब्दों की आग में जला देना चाहते हैं, जो हमारी प्रकृति के विपरीत और विकास में बाधक हैं –

"उसे सिर्फ चलाना नहीं चाहता
जलाना चाहता हूँ यों कि जले उसमें पड़ कर
गयी-गुजरी बातें और वे तरीके"[21]

पुरातन रीति-रिवाजों, परम्पराओं, रूढ़ियों, नियमों और बंधनों को तोड़कर कवि नवनिर्माण के आकांक्षी है। पुरातन जड़ परम्पराओं से मुक्त नयी बस्ती बसाने का आह्वान करते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कोकिल से कहते हैं -

"अरी हिलेंगी आज नियम की कड़ियाँ
आज हिलेंगी नियम तोड़कर
x x x x
चुप मत बैठो कोकिल गाओ बस्ती नयी बसाओ"[22]

नववर्ष के अवसर पर वे लोगों से पुरानी क्षुद्र परम्पराओं को क्षुद्र समझकर त्यागने का संकल्प करने का अनुरोध करते हैं, ताकि अचल जड़ विकार नष्ट हो और रूढ़ियों के पहाड़ लोगों के विकास के मार्ग को अवरुद्ध न कर पाए –

"हर पुरानी क्षुद्रता को क्षुद्र समझें आज के दिन,
और हर विद्रूप को विद्रूप समझें आज के दिन,"[23]

'नये गीत' शीर्षक कविता में भी भवानीप्रसाद मिश्र समय के साथ समाज में आने वाले बदलाव का समर्थन करते हुए पुरातन बंधनों को काटने की बात करते हैं –

"बदल गए शाश्वत स्वभाव भर गया पुराणों में नव-कंपन

नये गीत लिखने का मन है तब तू काट पुराने बंधन"[24]

भारतीय समाज में दृढ़ता से जड़ जमाये बैठी रूढ़ियों और अंधविश्वासों को दूर करने का प्रयास मध्ययुगीन संत कवि कबीर से लेकर राजाराममोहन राय और महात्मा गांधी जैसे अनेक समाज सुधारकों ने किया। पर ये जड़ परम्पराएँ आज भी हमारे जीवन में किसी न किसी रूप में मौजूद है। महात्मा गांधी के प्रयासों के बावजूद भारतीय जनमानस में मौजूद फूट, अन्धविश्वास और रूढ़ियों को देखकर भवानीप्रसाद मिश्र व्यथित हृदय से कहते हैं –

"और हमारी जनता में तो फूट अंधविश्वास, रूढ़ियाँ

तरह-तरह की कितनी दृढ़ हैं कितना काम किया बापू ने

किन्तु आज भी गाँव-नगर सब इनके गढ़ है।"[25]

इस स्थिति को देखकर कुछ पल के लिए कवि का भरोसा टूटने लगता है। वे सोचते हैं कि रूढ़ियों और अंधविश्वासों को दूर करने का महात्मा गांधी का स्वप्न क्या कभी पूरा नहीं होगा, पर दूसरे ही क्षण पुनः दृढ़ विश्वास के साथ गांधी की नीतियों का समर्थन करते हुए गुनगुनाने लगते हैं -

"नहीं नहीं यह सम्भव दिखता नहीं

भरोसा पलभर टिकता नहीं खींचकर लाता तो हूँ

कोई नहीं उठाता गाँधी गीत अकेला गाता तो हूँ"[26]

कोई भी जड़ परम्परा और धार्मिक रूढ़ियाँ समाज के लिए हितकारक नहीं होती। ये लोगों को एक दूसरे के खिलाफ खड़ा करके सदैव समाज को तोड़ने का काम करती है। धर्मान्धता में जकड़ा कोई भी व्यक्ति इतना साहस भी नहीं जुटा पाता कि उसका खुलकर विरोध कर सके। परिणामस्वरुप आजीवन रूढ़िवादी शृंखलाओं में बंधकर मनुष्य अपने और अपनी आने वाली पीढ़ी के भविष्य को भी अंधकार के गर्त में ढकेल देता है। समाज सुधारक गांधी के अनुयायी भवानीप्रसाद मिश्र अपनी कविताओं में पारम्परिक रूढ़ियों का वर्णन करते हुए उससे होने वाले नुकसान की ओर भी हमारा ध्यान आकर्षित कराते हैं। इतना ही नहीं वे इन रूढ़िवादी शृंखला की कड़ियों को तोड़ने के लिए हमें प्रोत्साहित भी करते हैं। उनका मानना है कि इन रूढ़ियों को तोड़कर ही हम नवनिर्माण में प्रवृत्त हो सकते हैं।

निष्कर्षतः धर्म के सम्बन्ध में महात्मा गांधी का दृष्टिकोण व्यापक एवं उदार था। उनकी धार्मिक भावना धर्म तथा समाज में व्याप्त जड़ता एवं रूढ़िवादिता का विरोध करने वाली थी। कोई भी जड़ परम्परा और धार्मिक रूढ़ियाँ समाज के लिए हितकारक नहीं

होती। ये लोगों को एक दूसरे के खिलाफ खड़ा करके सदैव समाज को तोड़ने का काम करती है। धर्मान्धता में जकड़ा कोई भी व्यक्ति इतना साहस भी नहीं जुटा पाता कि उसका खुलकर विरोध कर सके। परिणामस्वरुप आजीवन रूढ़िवादी शृंखलाओं में बंधकर मनुष्य अपने और अपनी आने वाली पीढ़ी के भविष्य को भी अंधकार के गर्त में ढकेल देता है। यही कारण है कि महात्मा गांधी के अनुयायी भवानीप्रसाद मिश्र अपनी कविताओं में पारम्परिक रूढ़ियों का वर्णन करते हुए उससे होने वाले नुकसान की ओर हमारा ध्यान आकर्षित कराते हैं। भारतीय जनमानस में मौजूद अन्धविश्वास और रूढ़ियों देखकर भवानीप्रसाद मिश्र व्यथित हैं। वे चाहते हैं कि मनुष्य को इन अन्धविश्वासों एवं रूढ़ियों से मुक्ति मिले। इतना ही नहीं वे इन रूढ़िवादी शृंखला की कड़ियों को तोड़ने के लिए हमें प्रोत्साहित भी करते हैं। उनका मानना है कि इन रूढ़ियों को तोड़कर ही हम नवनिर्माण में प्रवृत्त हो सकते हैं।

(ख) हरिजनोद्धार :

महात्मा गांधी गर्व से अपने को सनातनी हिन्दू बताते थे परन्तु उनका हृदय व्यथित था कि हिन्दू धर्म में अनेक अच्छे विचार होने के बावजूद अस्पृश्यता की विषबेल इस विराट वृक्ष की जड़ों को लगातार खोखला कर रही है। उनका मत था कि यदि हम इस शाप को अपने चिन्तन से नहीं मिटाएंगे तो यह हिन्दुत्व को विनाश के पथ पर ले जा सकता है। इस अस्पृश्यता को वे स्वराज के राह की सबसे बड़ी बाधा मानते थे। समाज में अस्पृश्य, अंत्यज या दलित कहकर पुकारे जाने वाले लोगों को समाज की मुख्य धारा में लाने के अपने आग्रह के चलते उन्होंने इनको प्रभु का जन अर्थात् हरिजन कहकर पुकारा। और इनके उद्धार के लिए हरिजनोद्धार आन्दोलन की शुरूआत कर आमरण अनशन भी किया। हिन्दू समाज से पवित्र साधनों द्वारा छुआछूत को जड़मूल से मिटाने के लिए महात्मा गांधी के प्रयासों से अखिल भारतीय छुआछूत विरोधी लीग, हरिजन सेवक संघ जैसी संस्थाओं की स्थापना हुई। सन् 1933 में 'हरिजन' साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। महात्मा गांधी अस्पृश्यता को मानवता के प्रति पाप की संज्ञा देते थे। वे चाहते थे कि प्रत्येक हिन्दू अस्पृश्यता उन्मूलन को अपनी जिम्मेदारी समझकर अस्पृश्यता रूपी राक्षस को मार गिराये। इसके लिए उन्होंने महात्मा की उपाधि तक को अस्वीकार कर दिया। उनका मानना था कि यदि हिन्दू धर्म अस्पृश्यता एवं सामाजिक कुरीतियों का खात्मा कर दे, तो यह विश्व का सर्वश्रेष्ठ धर्म सिद्ध हो सकता है।

छुआछूत रूपी व्याधि देश को लगातार पतन के गर्त में ढकेल रही है। महात्मा गांधी आजीवन अछूत कहे जाने वाले लोगों के उद्धार का प्रयास करते रहे। वे चाहते थे कि सारा देश अछूतों के उत्थान के लिए प्रयत्नशील हों। उनके लिए विद्यालय खुलें, कुएँ बनवाये जायें। वे जानते थे कि सवर्ण कहे जाने वाले ऊँची जाति के लोग अपने अन्याय का प्रतिकार

स्वयं नहीं करेंगे। यही कारण है कि गांधीजी अछूतों के पास गये। उन्हीं के नेता बनकर उनके दुःख को दूर करने का प्रयास किया। दलितों के प्रति गांधीजी की यही चिंता भवानीप्रसाद मिश्र के काव्य का विषय बन गई। महात्मा गांधी द्वारा परिचालित हरिजनोद्धार आंदोलन के परिणामस्वरूप समाज में अछूत कहे जाने वाले लोगों के लिए मंदिर के द्वार खुले, पीने के लिए स्वच्छ पानी की व्यवस्था हुई। गांधी के हरिजनोद्धार आंदोलन की सफलता का वर्णन कवि की निम्न पंक्तियों में देखा जा सकता है –

"चिंता तुम्हें है दलित वर्गों के उचित भवितव्य की
देश भर को तुम जगाते इस दिशा में अथक यात्रा कर रहे हो
खुल रहे हैं हर जगह मंदिर मदरसे कुएँ इन सबके लिए
जो अभी तक बिना मंदिर मदरसे या स्वच्छ पानी के रहे।"[27]

छुआछूत आज हिन्दुत्व के माथे पर लगा एक अमिट लांछन है जो हिन्दू धर्म को लगातार पतन के गर्त में ले जा रहा है। इस कुप्रथा ने हमारे समाज में गहराई से अपनी जड़े जमा ली हैं। यह एक अभिशाप है। किसी व्यक्ति को उसके काम की वजह से अछूत समझा जाना अनुचित है। हरिजनोद्धार आन्दोलन के माध्यम से महात्मा गांधी बार-बार इसी बात को दोहराते रहे। भवानीप्रसाद मिश्र ने अपनी कविताओं के माध्यम से उक्त आन्दोलन को आगे बढ़ाया। अपनी कविताओं के माध्यम से उन्होंने यह संदेश दिया कि संसार में रहने वाले सभी मनुष्य समान हैं इसलिए हमें ऊँच-नीच का भाव अपने मन में नहीं लाना चाहिए। चाहे व्यक्ति का जन्म ब्राह्मण के घर में हो या शूद्र के घर में वह प्रभु का अंश है। शूद्र के घर में जन्म लेने वाला व्यक्ति भी उतना ही पवित्र और महान है, जितना की ब्राह्मण के घर में जन्म लेने वाला व्यक्ति है –

"ध्यान न आने दे हम छोटे-बड़े किसी भी उस खाने का
कर रखता हो जो हमको इस ऊँचे या नीचे विभाग का
हम समझे यह सत्य कि मानव-मानव सारे ही समान हैं !
बड़े छोटे चाहे जैसे हो सब पवित्र हैं, सब समान हैं !"[28]

महात्मा गांधी ने दक्षिण अफ्रीका से लौटते ही यह अनुभव किया कि छुआछूत के रहते भारत का उद्धार संभव नहीं है। हरिजनों को समाज में समानता का अधिकार दिलाने अर्थात् उनके उद्धार हेतु महात्मा गांधी को काफी संघर्ष करना पड़ा। सवर्ण हिन्दुओं के हृदय परिवर्तन के लिए उन्होंने धरने, हड़ताल उपवास और व्रत का सहारा लिया। पर समाज में फूट डालने वाले अस्पृश्यता के समर्थकों ने उनके इन कामों में बाधा डाली। अछूत हिन्दू समाज से अलग गिने जाएँ यह उन्हें बर्दाश्त नहीं था। उन्हें विश्वास था कि छुआछूत के

खिलाफ जोरदार अभियान चलाकर इसे खत्म किया जा सकता है। गांधीजी के इसी अभियान या हरिजनोद्धार आन्दोलन को उनके अनुयायी भवानीप्रसाद मिश्र ने जन-जन तक पहुँचाने के लिए अपनी कविताओं को इसका माध्यम बनाते हुए 'गांधी का सपना' शीर्षक कविता में लिखते हैं –

"अलग गिने जायें अछूत हिन्दू समाज से
और न होने पायें ऐसा व्रत लेकर
गांधीजी उपवास शुरू कर रहे आज से"[29]

महात्मा गांधी छुआछूत या जात-पाँत को हिन्दू धर्म के माथे पर लगा अमिट कलंक मानते थे। उन्होंने लिखा है – "मैं मानता हूँ कि यह एक भयंकर अभिशाप है। और यह अभिशाप जब तक हमारे साथ रहेगा तब तक मुझे लगता है कि इस पावन भूमि में हमें जो भी तकलीफ सहनी पड़े वह हमारे इस अपराध का, जिसे हम आज भी कर रहे हैं, उचित दंड होगी।"[30] अपने इन्हीं विचारों के चलते वे अस्पृश्यता को मनुष्य के खिलाफ किया गया भयंकर अपराध मानते थे। अस्पृश्य कहे जाने वाले हरिजनों के प्रति उनके हृदय में इतनी हमदर्दी थी कि अगले जन्म में वे अतिशूद्र के रूप में जन्म लेने की कामना कर रहे थे। 'यंग इंडिया' में उन्होंने स्पष्ट कहा है – "मैं फिर से जन्म लेना नहीं चाहता। लेकिन मेरा पुनर्जन्म हो ही तो मैं अछूत पैदा होना चाहूँगा ताकि मैं उनके दुःखों कष्टों और अपमानों का भागीदार बनकर स्वयं को और उन्हें इस दयनीय स्थिति से छुटकारा दिलाने का प्रयास कर सकूँ। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि यदि मेरा पुनर्जन्म हो तो अतिशूद्र के रूप में हो।"[31] इस प्रकार गांधीजी का सपना था कि किसी भी तरह से हिन्दू धर्म के माथे पर लगा यह कलंक उतरे। इसके लिए यदि प्राण भी देने पड़े तो वे इसके लिए तैयार थे। यही कारण है कि समाज में अस्पृश्य माने जाने वाले हरिजनों को हिन्दू धर्म में समानता का अधिकार दिलाने के लिए महात्मा गांधी बराबर अपनी आवाज बुलन्द करते रहे। महात्मा गांधी के हरिजनोद्धार कार्यक्रम से प्रभावित होकर गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र ने भी हिन्दू धर्म में व्याप्त छुआछूत की भावना को चुड़ैल करार देते हुए गांधीजी के स्वप्न को पूर्ण करने के लिए स्वयं मिटकर भी इसे मिटाने का संकल्प लेते हुए कहते हैं –

"मगर-साफ यह बात हमारे गले न उतरी
हम पर चढ़ी चुड़ैल छूत की, भले न उतरी
लेकिन अब तो हमें होश में आना होगा
और नहीं तो मिटना और मर जाना होगा।"[32]

महात्मा गांधी पूँजीवाद और साम्यवाद दोनों के विरोधी थे। उनकी दृष्टि में साम्यवाद अभारतीय तत्त्वों से अनुप्राणित एक मोर्चा मात्र है। दलित वर्ग के प्रति उसके अपनेपन की भावना महज झूठी सांत्वना है और उनके हित की कामना में बहते हुए आँसू मात्र फैशन है। भवानीप्रसाद मिश्र सच्चे गांधीवादी थे। उन्होंने अपने जीवन में अक्षरसः गांधीवादी विचारों का पालन किया। महात्मा गांधी किसी भी कीमत पर समाज से अस्पृश्यता या छुआछूत की भावना को जड़मूल से नष्ट कर देना चाहते थे। भवानीप्रसाद मिश्र ने भी आजीवन इसके लिए प्रयत्न किया। वे अत्यंजों को हित के लिए साम्यवाद को भी स्वीकार करने के लिए तैयार थे। 'गांधी पंचशती' में 'साम्यवादी मित्र से' शीर्षक कविता में साम्यवादी मित्र से जी खोलकर बातें करते हुए उन्होंने स्पष्ट कहा है कि प्रगतिवादियों के हृदय में यदि दलितों के प्रति अपनत्व की भावना है, प्रगतिवादि आन्दोलनों से यदि इनको सामाजिक न्याय मिलता है तो उन्हें प्रगतिवाद स्वीकार्य है –

"यदि दलितवर्ग के प्रति अपनापन प्रगतिवाद
तो तुम मुझको इस घेरे में ले सकते हो
यदि हो सामाजिक न्याय अर्थ इस हलचल का
तो थोड़ा जिम्मा उसका भी दे सकते हो"[33]

महात्मा गांधी अपने किसी भी विचार को तब तक व्यक्त नहीं करते थे जब तक वे उसे अपने जीवन में नहीं उतारते थे। हिन्दू समाज में प्रचलित जात-पाँत और छुआछूत के विरोध के पहले उन्होंने अस्पृश्य कहे जाने वाले लोगों को अपने जीवन में स्थान दिया। उनकी दृष्टि में समाज का कोई भी व्यक्ति चाहे वह शूद्र हो या ब्राह्मण उनमें कोई भेद नहीं है। हरिजनोद्धार आन्दोलन के तहत उन्होंने हिन्दू समाज के उच्च वर्ग के लोगों से अत्यंज या शूद्र कहे जाने वाले लोगों को गले लगाने का आह्वान किया। जो व्यक्ति छुआछूत या भेदभाव को मानता था गांधीजी ने उसे अपने जीवन से दूर कर दिया। हरिजनोद्धार आन्दोलन प्रारंभ करते समय वे नाई से अपनी दाढ़ी बनवाते थे पर बाद में उन्हें पता चला कि उनका नाई हरिजन को अपना भाई नहीं समझता। इस बात की जानकारी मिलते ही उन्होंने अपने नाई का बहिष्कार कर दिया। हरिजनोद्धार आन्दोलन के प्रति जनमानस में चेतना जाग्रत करने के लिए महात्मा गांधी के जीवन के इस प्रसंग को भवानीप्रसाद मिश्र ने अपनी कविता के माध्यम से उजागर किया। यथा –

"पहले नाई से बनवाते थे गांधीजी अपनी दाढ़ी
किन्तु बाद में पता चला उनका भी नाई
नहीं समझता है हरिजन को अपना भाई
छूत मानता है वह उसकी

गांधीजी ने शुरू कर दिया तब से दाढ़ी स्वयं बनाना।"[34]

बापू के जीवन की यह घटना प्रमाणित करती है कि वे सही मायने में हरिजनों के उद्धार के लिए कार्य कर रहे थे और उनके अनुयायी भवानीप्रसाद मिश्र अपनी रचनाओं के माध्यम से इस काम को अंजाम दे रहे थे।

केवल अछूतों से मित्रता कर लेने पर अछूतोद्धार नहीं होता। अछूतोद्धार का अर्थ है मनुष्य-मनुष्य के बीच की दीवार को तोड़ दिया जाय। ये दीवारें तभी टूट सकती है जब हर हिन्दू उनके काम को अपना ही काम समझे और जब हरिजनों का बहिष्कार हो तो उनके मित्र बनकर उनके साथ खड़ा हो जाये। अगर सही मायने में ऐसा होता है तभी हरिजनोद्धार हो सकता है, अन्यथा नहीं। महात्मा गांधी और उनके अनुयायी भवानीप्रसाद मिश्र दोनों ने हरिजनोद्धार आंदोलन के इन विचारों को अपने जीवन में उतारा था। भवानीप्रसाद मिश्र ने सफाई के काम को कभी घृणित नहीं माना। वे अपना ही नहीं आश्रम में रहने वाले हरिजन सेवकों का शौच भी धोते थे। विजय बहादुर सिंह के अनुसार – "महिला आश्रम के प्रत्येक व्यक्ति को नियमानुसार शौचालय की सफाई की जिम्मेदारी का पालन करना पड़ता था। भवानी भाई भी इस काम को नित्य प्रति करते थे।"[35] इस कार्य को करने की प्रेरणा उन्हें महात्मा गांधी से ही मिली थी। गांधीजी भी भंगी का कार्य स्वयं करते थे। उन्हें इस काम से कोई एतराज नहीं था। भवानीप्रसाद मिश्र के अनुसार –

"भंगी-काम सफाई से नित करना भाता था।"[36]

गांधीजी सिर्फ भंगी का काम करने से ही संतुष्ट नहीं थे। हरिजनों के उद्धार के लिए उन्होंने हरिजन सेवक संघ की स्थापना की। 'हरिजन' पत्रिका का प्रकाशन किया और घुम-घुम कर हरिजनों के उद्धार के लिए हरिजन कोष भी इकट्ठा किया ताकि पूर्ण रूप से हरिजनों का उद्धार हो। उन्हें समाज में उचित सम्मान मिले। हरिजन कोष में संग्रहित एक-एक पैसे को वे हरिजनों के उद्धार में खर्च करना चाहते थे। इस कार्य के प्रति उनकी सजगता का अहसास भवानीप्रसाद मिश्र द्वारा रचित 'एक पैसा और गांधी' शीर्षक कविता में होता है। भवानीप्रसाद मिश्र के अनुसार गांधी की दृष्टि में हरिजनों के हित के लिए इकट्ठा किया गया एक-एक पैसा मोहरों से भी ज्यादा महंगा है। यथा –

"हरिजन कोष इकट्ठा करते रहे एक दिन
किसी सभा में पैसा एक गिर गया नीचे
गांधीजी तत्काल बैठकर लगे ढूंढ़ने
x x x x

एक-एक पैसा गरीब का महंगा है मोहरों से ज्यादा
जब तक उसे नहीं पा लेता
भीड़ उमड़ती है तो उमड़े उसे नहीं मानूंगा बाधा।"[37]

छुआछूत महज एक सामाजिक समस्या ही नहीं बल्कि एक अमानुषिक प्रथा है। इसे दूर करने का अर्थ है अछूतों को सार्वजनिक संस्थाओं में प्रवेश कराना, स्कूल और मंदिर में प्रवेश कराना, कुएँ का उपयोग कराना। महात्मा गांधी छुआछूत की भावना को हिन्दू धर्म में व्याप्त तमाम भेदों की जड़ मानते थे। उन्हें आशा थी कि अगर हिन्दू समाज से छुआछूत का भेद खत्म हो जाए तो दुनिया के तमाम भेदों की जड़ें अपने-आप हिल उठेंगी। अगर ऐसा होता है तो केवल भारत में ही नहीं सारी दुनिया में समानता की भावना का विस्तार होगा। महात्मा गांधी के इन्हीं विचारों का काव्य में कायांतरण करते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"छुतछूत का भेद मिटे तो गांधी की ऐसी आशा है
दुनिया के तमाम भेदों की जड़ हिलेंगी
यह बसन्त की ऋतु यदि फैली
तो सारी दुनिया में समता के फूलों की फसल खिलेगी।"[38]

हरिजनोद्धार के कार्यक्रमों को प्रमुखता से अपने काव्य का विषय बनाने वाले कवि भवानीप्रसाद मिश्र जब असहयोग आन्दोलन के बंदी साथियों को जेल से विदा देते हुए जिन छोटी-छोटी बातों की याद दिलाते हैं, उनमें छुआछूत का नाश भी है –

"खादी के काम नये ढँग को शालाएँ छुआछूत का नाश
ये छोटी-छोटी बातें हैं जो फिर आशा लौटायेंगी"[39]

गांधीजी समाज से छुआछूत को खत्म कर देना चाहते थे। वे इसके लिए आजीवन प्रयत्नरत रहे। वे स्वयं हरिजनों की बस्तियों में रहे, हरिजनों को अपने पास आश्रम में रखा, कई आन्दोलन किये और एक सीमा तक इस बुराई को दूर करने में उन्हें सफलता भी मिली। गांधीवाद में आकंठ निमग्न भवानीप्रसाद मिश्र भी छुआछूत को देश से निर्वासित करना चाहते थे। वे छुआछूत को दूर करने में किसी देवता का नहीं बल्कि महामानव महात्मा गांधी का योगदान सर्वाधिक मानते हैं। महात्मा गांधी के प्रभावस्वरूप समाज में जात-पाँत और छुआछूत की भावना कम हुई है। उनके इसी प्रभाव को व्यक्त करते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"ये जो फिरके खत्म हुए हैं, यह जो छुआछूत भागी है
यह जो पशुता सकुचाई है, यह जो नवशुचिता जागी है

x x x x

तुम हो भारत की माटी के एक पुष्ट फल

जिसने रोगाक्रांत देह को पथ्य दिया, आहार दिया है।"[40]

हालांकि महात्मा गांधी ने छुआछूत को दूर कर अछूतों को समानता का अधिकार दिलाने का प्रयास किया। पर इस प्रयास का समाज पर आंशिक प्रभाव ही पड़ा। छुआछूत का पूर्णरूप से खात्मा नहीं हो पाया। यह समस्या आज भी हमारे समाज में कमोबेश रूप में मौजूद है। गांधी की राह पर चलने वाले कवि भवानीप्रसाद मिश्र इसे पूर्ण रूप से खत्म कर देना चाहते हैं। यही कारण है कि महात्मा गांधी के हरिजनोद्धार आन्दोलन को वे अपनी कविताओं के माध्यम से जीवित रखे हुए हैं। वे बापू के सपने को पूरा करने की प्रेरणा लोगों को देते हैं। उनका मानना है कि जब तक दलित समाज के एक-एक व्यक्ति की पीड़ा खत्म नहीं होगी हम चुप नहीं बैठेगें। यथा

"हम आज वचन दोहराते हैं पिछला अपना

हरचंद करेंगे पूरा बापू का सपना

हम ऊँच-नीच का भेद मिटाकर मानेंगे

आसिन्धु हिमालय सबका दुख पहचानेंगे।"[41]

निष्कर्षतः महात्मा गांधी हिन्दू धर्म के माथे पर लगे अमिट कलंक छुआछूत की भावना को जड़मूल से खत्म कर देना चाहते थे। उनका मानना था कि हिन्दू धर्म से छुआछूत खत्म हो जाये तो यह विश्व का सर्वश्रेष्ठ धर्म सिद्ध हो सकता है। समाज में अस्पृश्य या अछूत कहे जाने वाले लोगों को मुख्यधारा में लाने के लिए महात्मा गांधी ने हरिजनोद्धार आंदोलन प्रारम्भ किया। अस्पृश्यों के प्रति गांधीजी की यह चिंता भवानीप्रसाद मिश्र के काव्य का विषय बन गई। महात्मा गांधी के इस हरिजनोद्धार आंदोलन को उनके अनुयायी कवि भवानीप्रसाद मिश्र ने अपनी कविता के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया। उन्होंने कविता के माध्यम से यह संदेश दिया कि संसार में रहने वाले सभी मनुष्य समान हैं। उन्हें विश्वास था कि यदि छुआछूत का भेद मिट तो जाये दुनिया के तमाम भेदों की जड़े हिलेंगी और वे स्वयं समाप्त हो जाएंगे।

(ग) स्वतंत्रता संग्राम में गांधी का नेतृत्व :

भारतीय राजनीति में जब महात्मा गांधी का पदार्पण हुआ उस समय स्वतंत्रता संग्राम चरम पर था और महात्मा गांधी ने अपनी विचारधारा से इस संग्राम को एक नई दिशा प्रदान की। स्वतंत्रता मनुष्य का स्वाभाविक गुण है इसलिए महात्मा गांधी के अनुसार, "मनुष्य को व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित करके संभवतः किसी समाज की रचना

नहीं हो सकती।"[42] पर स्वतंत्रता का प्रयोग समाज हित में अहिंसात्मक ढंग से होना चाहिए। स्वतंत्रता का वास्तविक प्रयोजन जीवन का पूर्ण विकास है। महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता के तीन रूप - राजनीतिक, आर्थिक और नैतिक - स्वीकार किए हैं। यहाँ हमारा आलोच्य विषय राजनीतिक स्वतंत्रता है। राजनीतिक स्वतंत्रता के अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए महात्मा गांधी ने लिखा है – "राजनीतिक स्वतंत्रता का अभिप्राय यह है कि देश पर ब्रिटिश सेनाओं का किसी भी रूप में शासन न हो।"[43] अर्थात् अंग्रेजी फौज के प्रत्येक स्वरूप का नियंत्रण पूर्ण रूप से हटा दिया जाये। गांधीजी ने देश की स्वतंत्रा का वैचारिक समर्थन करने के साथ-साथ भारत की स्वतंत्रता के लिए अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किए। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में अहिंसावादी-असहयोग आन्दोलन की नींव रखी। इससे अहिंसक वीरता की भावना का प्रचार हुआ। डॉ. नगेन्द्र के मतानुसार "वास्तव में अहिंसा वीरता का उज्ज्वलतम रूप है, और गांधीजी से बड़ा वीर इस युग ने उत्पन्न नहीं किया। दूसरे, राजनीतिक परिस्थितियाँ भी शीशदान के इस महत्त्व के लिए उत्तरदायी है।.....भौतिक बल से आत्मिक बल का प्रभाव कहीं अधिक है, यह समझने में भारत जैसे देश को देर नहीं लगी ; और वह मारकर नहीं, मरकर विजय प्राप्त करने के लिए उत्साहित होने लगा।"[44] गांधीजी ने स्वतंत्रता संग्राम में सत्याग्रह, असहयोग, सविनय अवज्ञा जैसे अस्त्रों का प्रयोग किया। उनके अनुसार विदेशियों का शासन अंहिसा पर आधारित था इसलिए वह अनैतिक और असत्य था। उसको जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए उन्होंने सत्य और अहिंसा से एक अहिंसक क्रान्ति का सूत्रपात किया। परन्तु इस पूरे स्वतंत्रता संग्राम के दौरान उन्होंने जिस चीज का विशेष ध्यान रखा वह है साधनों की पवित्रता। साधनों की अनैतिकता साध्य की नैतिकता को नष्ट कर देती है। यही कारण है कि उन्होंने साधनों की पवित्रता का ध्यान रखते हुए सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा जैसे आन्दोलन किये और उनके नेतृत्व में भारत स्वाधीन हुआ।

स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गांधी के नेतृत्व से प्रेरित एवं प्रभावित होकर सम्पूर्ण निष्ठा के साथ कार्य करने वालों में भवानीप्रसाद मिश्र का नाम उल्लेखनीय है। सन् 1930 के बाद के स्वतंत्रता संग्राम की प्रत्येक महत्त्वपूर्ण घटना, आंदोलन और जेल यात्रा का पूरा इतिहास इनकी कविताओं में चित्रित है। कवि स्वयं स्वतंत्रता आंदोलन में अपना योगदान करते रहे हैं। जेल यात्राओं का एक गौरवमय इतिहास उनके पास है। स्वाधीनता के जुनून में जेल गए साथियों को विदा देते हुए भवानीप्रसाद मिश्र ने स्वतंत्रता संग्राम के अपरिचित साहस एवं उत्साह को इस प्रकार व्यक्त किया है –

"बाहर जाकर इतना कहिए, भीतर के लोग जोश में हैं

और उससे ज्यादा बड़ी बात भीतर के लोग होश में हैं
दीवार जेल की गांधी को नेहरू को निगल नहीं सकती
लहरे आजादी की ऐसे रोके से कभी नहीं रूकती"[45]

गांधी विचारदर्शन में अपनी अटूट निष्ठा के चलते इन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से देश की जनता को साधनों की पवित्रता का ध्यान रखते हुए अंग्रेजों के विरूद्ध संघर्ष का संदेश दिया है। महात्मा गांधी द्वारा परिचालित सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा आन्दोलन के अनेक दृश्य इनकी कविताओं में बिखरे पड़े हैं।

(i) साधनों की पवित्रता :

स्वतंत्रता प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है। जब तक मनुष्य पूर्ण स्वतंत्र नहीं है तब तक वह गुलाम है। ईश्वर ने संसार के सभी प्राणियों को स्वतंत्रता दी है इसलिए किसी भी व्यक्ति को उसके अधिकार से वंचित करने का अधिकार नहीं है। व्यक्ति सर्वोपरि है क्योंकि राज्य की सम्प्रभुता जनता में निहित है। अर्थात् व्यक्ति की स्वतंत्रता के बिना राज्य निर्माण के बारे में सोचना निर्रथक है। राज्य का निर्माण तो व्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए होता है। महात्मा गांधी के अनुसार – "मनुष्य को व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित करके संभवतः किसी समाज की रचना नहीं की जा सकती। यह मनुष्य की प्रवृत्ति के सर्वथा प्रतिकूल है।"[46] महात्मा गांधी के इन्हीं विचारों को 'तुम्हारे शब्द' शीर्षक कविता में व्यक्त करते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं कि मनुष्य को संसार में चार दिन ही क्यों न रहना पड़े, पर उसे गौरव से रहना चाहिए। स्वतंत्रता मनुष्य का प्राप्य है वह उसे लेकर ही रहेगा। यथा –

"मगर जब आदमी की देह ली है और भारत में
तो हम को चार दिन क्यों न हो, गौरव से रहना है।
रहन गौरव की निश्चय ही गुलामी में नहीं सधती
बहुत संभव है कड़ियाँ जो बँधी हैं स्वर्ण की ही हों
हमें तो प्राप्य अपना चाहिए भिक्षा नहीं कोई"[47]

इस प्राप्य को प्राप्त करने के लिए महात्मा गांधी बल प्रयोग को अपवित्र साधन मानते थे। इसलिए उन्होंने हिंसात्मक ढंग से देश को स्वतंत्र कराने का मार्ग कभी स्वीकार नहीं किया। भवानीप्रसाद मिश्र ने गांधी विचारदर्शन को स्वयं अपने जीवन में उतारा था। जीवन में आत्मसात् गांधी विचारदर्शन की परछाई उनके काव्य में भी दिखाई पड़ती हैं। साधनों की पवित्रता पर भवानीप्रसाद मिश्र की प्रबल आस्था है। किसी भी लक्ष्य को प्राप्त

करने के लिए साधन शुद्ध रखना हमारा प्रथम कर्त्तव्य होना चाहिए। गलत राह पर चलकर लक्ष्य प्राप्ति निर्रथक है। इसलिए अत्यंत विश्वास के साथ भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"हमको है इसका भान कि गलती हो जाना सबसे सम्भव
इसलिए साध्य का अच्छा होना ठीक किन्तु
साधन का होना शुद्ध ऐन आवश्यक है"[48]

महात्मा गांधी शांतिपूर्ण उपायों से आजादी हासिल करना चाहते थे। रक्तपात के जरिए आजादी हासिल करने की अपेक्षा, वे युगों तक आजादी की प्रतीक्षा करने के लिए तैयार थे। उन्होंने स्पष्ट कहा है – "भारत को अपनी आजादी शांतिपूर्ण उपायों से हासिल करनी होगी।"[49] शांतिपूर्ण उपायों द्वारा आजादी हासिल करने की प्रेरणा देने वाले महात्मा गांधी के इन विचारों का गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र पर गहरा प्रभाव पड़ा। कवि के हृदय में भी स्वतंत्रता की आकांक्षा है। वे देश के लिए मर-मिटना चाहते हैं। पर इस पूरी प्रक्रिया में साधनों की पवित्रता वे नहीं भूलते हैं। यही कारण है कि कवि स्वतंत्रता के लिए शीश ऊँचा करके चलते हुए अपने गले को फौलादी पंजों में फँसाने की बात कहते हैं। मरने की इस बेला पर अपने को बलिदान करने की बात करते हैं। एक बार भी उनके मुँह से अपने पंजों में दुश्मन का गला फँसाने और दुश्मन को मारने की बात नहीं निकलती। वे सिर्फ त्याग और बलिदान के बल पर आजादी पाना चाहते हैं –

"पर हमें चाहिए अगर आज आजादी
तो इन पंजों में गले फँसाने होंगे,
x x x x
ऐ, ऊँचा करके शीश चलो रे भाई
मुश्किल से आती है मरने की बेला
वह सही तरण जो इन घड़ियों से खेला
ऊँचे शीशों की अदा अजब मस्तानी,
फौलादी पंजे जिसके आगे पानी"[50]

अपना गला फँसाकर और स्वयं को होम करके आजादी प्राप्त करने की यह योजना निराली है।

स्वतंत्रता आन्दोलन में अंग्रेजों के खिलाफ भारत का नेतृत्व करते समय महात्मा गांधी को शारीरिक बल से अधिक आत्मबल पर भरोसा था। वे चाहते थे कि सभी भारतवासी आत्मशक्ति के बल पर सत्य और अहिंसा की राह पर चलते हुए स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग

ले तो वे अपनी आत्मशक्ति के बल पर आग की लपटों से भी आगे दिखेंगे। 'अकेले तुम' शीर्षक कविता में भवानीप्रसाद मिश्र यही बात निम्न शब्दों में प्रकट करते हैं –

"चलो तुममें शक्ति है तुम लपट के आगे दिखोगे
शक्ति है तुममें चलो तुम ज्वाल से ज्यादा जगोगे।"[51]

अहिंसा एक पवित्र साधन है जो मनुष्य के हृदय में परस्पर सच्चाई, विनम्रता, सहिष्णुता और प्रेममय दयालुता जैसे व्यवहार को विकसित करता है। अहिंसा के इस गुण से प्रभावित होकर महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता संग्राम में अहिंसा रूपी अस्त्र का प्रयोग किया। वे इसे स्वतंत्रता प्राप्ति की राह का पवित्र साधन मानते थे। अहिंसा के प्रति उद्गार व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा है – "मैं केवल एक मार्ग जानता हूँ – अहिंसा का मार्ग। हिंसा का मार्ग मेरी प्रकृति के विरुद्ध है। मैं हिंसा का पाठ पढ़ाने वाली शक्ति को बढ़ाना नहीं चाहता।"[52] अहिंसा के प्रति अपनी पूर्ण आस्था के चलते वे बार-बार स्वतंत्रता संग्राम में देशवासियों से अहिंसा की राह पर चलने का आग्रह कर हिंसा का विरोध करते रहे। गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र महात्मा गांधी के इन्हीं विचारों का समर्थन अपनी कविताओं के माध्यम से करते हुए देशवासियों को अपवित्र साधनों को त्याग कर पवित्र साधनों को अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। यथा –

"हिंसा का लेश भी है
जैसे जिन साधनों में
उनका मैं विरोधी हूँ"[53]

स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व करते हुए महात्मा गांधी ने सत्याचरण निभाने का व्रत लिया। साध्य की श्रेष्ठता साधनों की पवित्रता पर निर्भर है। स्वस्थ लक्ष्य की प्राप्ति तभी हो सकती है जब साधन उत्तम एवं पवित्र हो। भवानीप्रसाद मिश्र लक्ष्य प्राप्ति में साधनों की पवित्रता को परम आवश्यक मानते हैं। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि अगर साधन पवित्र है तो हमारे हर वो साध्य पूर्ण होंगे जिनके हमने स्वप्न देखे हैं –

"साधन शुद्ध रखे हम अपने
स्वयं पूर्ण हो जायेंगे वे साध्य
कि जिनके देखे सपने"[54]

जीवन का कोई भी क्षेत्र चाहे वह स्वतंत्रता आन्दोलन हो या सामाजिक आन्दोलन व्यक्ति को पूर्ण सफलता तभी मिलती है जब साधन पवित्र हो। अपवित्र साधनों को अपनाकर मिली सफलता न तो कभी पूर्णता प्रदान करती है और न ही स्थायी होती है।

संसार में मनुष्य उतनी ही प्रगति कर पाता है जितने उसके साधन शुद्ध होते हैं। साधनों के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए गांधीजी ने कहा है – "मैं जानता हूँ कि अगर हम साधनों की चिन्ता रख सकें, तो ध्येय की प्राप्ति निश्चित है। मैं यह भी अनुभव करता हूँ कि ध्येय की ओर हमारी प्रगति ठीक उतनी ही होगी, जितने हमारे साधन शुद्ध होंगें।"[55] पवित्र साधनों को अपनाने पर लक्ष्य प्राप्ति में समय अधिक लग सकता है पर इस मार्ग पर सफलता सुनिश्चित है। भवानीप्रसाद मिश्र को भी लक्ष्य प्राप्ति के लिए पवित्र साधनों पर विश्वास है। उनका मानना है कि माँग सही हो और साधन पवित्र हो तो फिर ईश्वर भी उस व्यक्ति का साथ देता है। ऐसा व्यक्ति संसार में कभी असफल नहीं होता –

"माँग सही साधन पवित्र
प्रभु साथ हमारे रहे सत्य पर
अविचल सत्याग्रही
तो सम्भव नहीं कि वह संसार में हारे"[56]

महात्मा गांधी सदैव भारत की स्वतंत्रता की माँग को सही मानते रहे। इसीलिए उन्होंने अंग्रेजी शासन का विरोध किया और स्वतंत्रता आन्दोलन में सत्य और अहिंसा जैसे पवित्र साधनों का प्रयोग करते हुए आन्दोलन का नेतृत्व किया। गांधी विचारदर्शन को ठोक-बजाकर आत्मसात् कर संवेदना के स्तर पर काव्य में अभिव्यक्त करने वाले गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र ने महात्मा गांधी के नेतृत्व में होने वाले स्वतंत्रता संग्राम में स्वयं प्रत्यक्ष रूप से अंश ही ग्रहण नहीं किया बल्कि उन्होंने समस्त देशवासियों को इस संग्राम में हिस्सा लेने के लिए आमंत्रित किया पर इस चेतावनी के साथ कि इस पथ पर चलते हुए हमें साधनों की पवित्रता का विशेष ध्यान रखना है। हमें ऐसा कोई काम नहीं करना है जिससे हमारे भाल पर कोई दाग लगे –

"इस मुहूर्त में रूके न कोई, दुर्गम पथ पर चुके न कोई
रूकना चुकना दूर, कहीं पर इस मुहूर्त पर झुके न कोई
कोई दाग नहीं लग पाये इस क्षण भाल हमारे पर
कान खोलकर सुनो निमंत्रण गूँजा है नक्कारे पर"[57]

प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों से निर्मित होने के कारण गांधी दर्शन की रीढ़ साधनों की पवित्रता है। यह दर्शन देश को स्वतंत्र कराने के लिए क्रान्तिकारियों के हिंसात्मक मार्ग को स्वीकार नहीं करता। इसी आधार पर भवानीप्रसाद मिश्र भी यह मानते हैं कि आजादी हमें सेतमेत में मिलने वाली नहीं है, इसे हमें प्रयास करके हासिल करना पड़ेगा। पर इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में हमें गांधी के दिखाये मार्ग का ही अनुसरण करना है।

महात्मा गांधी के अनुसार आजादी की सबसे बड़ी कसौटी है आपस की एकता और अपने को बलिदान करने की क्षमता। महात्मा गांधी ने हमें इन साधनों को साधने का रास्ता दिखाया है और हमें इस पर चलना है –

"आजादी किसी के दिए मिलती नहीं है भाई
लेना उसे पड़ता है
और उसे लेने की योग्यता का अर्थ है
आपस का एक्य और मरने की क्षमता
गांधी ने हमेशा हमें इतना सिखाया है
और इसे साधने का रास्ता दिखाया है।"[58]

आजादी हमें तभी मिल सकती है जब हम साधनों की पवित्रता का ध्यान रखते हुए महात्मा गांधी की राह पर चलकर जाति, वर्ण और धर्म के भेदों को भूलाकर एक हो जाएँ। भवानीप्रसाद मिश्र का मानना है कि महात्मा गांधी का बिना किसी रक्तपात के समता, स्वतंत्रता और बन्धुता का सपना वास्तविकता में तभी परिणत हो सकता है जब हिन्दू और मुसलमान दोनों समुदाय के लोग आपसी भेदभाव को भूलाकर एक हों अर्थात् स्वतंत्रता संग्राम में एक दूसरे के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर खड़े हो जायें –

"हिन्दू और मुसलमान मिलकर खड़े रहें
तो यह देश अपना सिद्ध करेगा जग में
बिना रक्तपात किये होता है पूरा कैसे
समता का, स्वतंत्रता का बन्धुता का सपना!"[59]

महात्मा गांधी हिंसा की जगह अहिंसा, नफरत की जगह प्यार और नैतिक आदर्शों को स्वतंत्रता संग्राम का केन्द्रीय तत्त्व बनाने के आग्रही थे। पर हमारे समाज में कुछ ऐसे स्वार्थी तत्त्व भी थे जो पूरे परिवेश को अपने हित में साधने की कुचेष्टा कर रहे थे। वे झूठ, हिंसा, नफरत, स्वार्थ जैसे अपवित्र साधनों का दामन थामे बैठे थे और इन्हीं के बल पर आजादी का स्वप्न देख रहे थे। महात्मा गांधी के साधनों की पवित्रता के विचारों को व्यवहार के क्षेत्र में कदम-कदम पर चूरा होते देख कर गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र क्षुब्ध होते हैं। वे अपनी रचना और व्यवहार दोनों स्तरों पर इसका विरोध करते है और अपने हृदय की पीड़ा को व्यक्त करते हुए कहते हैं –

"बड़े थे उनके लिए
साध्य और साधन की एकता के विचार
आचार के हर क्षेत्र में चूरा हो रहा है जिनका

आज डग-डग पर"[60]

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान गांधीजी बार-बार साधनों की पवित्रता का हवाला देकर लोगों से सत्य और अहिंसा के मार्ग पर चलने का आग्रह करते रहे। पर कुछ लोग महात्मा गांधी के विचारों से सहमत नहीं थे वे हिंसा और रक्तपात के बल पर आजादी प्राप्त कर समाज में बदलाव लाना चाहते थे। पर कवि भवानीप्रसाद मिश्र अपनी कविता के माध्यम से हिंसा और रक्तपात का समर्थन करने वाले लोगों का विरोध करते रहे। अपवित्र साधनों के बल पर समाज में बदलाव और प्रगति लाने वाले लोगों के कार्यों को भवानीप्रसाद मिश्र आदमियत की छाती में छेद बताकर ऐसे लोगों को चुल्लू भर पानी में डूब मरने की सलाह देते हुए कहते हैं –

"यह मतभेद नहीं है आदमियत की छाती में छेद है
कहते हो हमें समाज बदलना है
पूछता हूँ काहे के बल पर
x x x x
तुम इस तरह समाज पर समाज
राष्ट्र पर राष्ट्र बदलने को प्रगति कहते हो
सोच कर देखो और डूब मरो
चुल्लू-भर पानी में बोल-चाल की वाणी में"[61]

गांधी विचारदर्शन प्रकृतिशील जीवन मूल्यों को लेकर चला है। गांधी विचारधारा से प्रभावित होने वाले भवानीप्रसाद मिश्र ने महात्मा गांधी के नेतृत्व में प्रत्यक्ष रूप से स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया है। वे भी देश को गुलामी से मुक्त कराना चाहते थे पर गांधी के रास्ते पर चलकर और साधनों की पवित्रता को अपनाकर उन्हें लड़ाई का गांधीवादी ढंग पंसद था। महात्मा गांधी की भाँति वे देश की आजादी को रक्तरंजित करने के पक्षधर नहीं थे। हिंसा की राह पर चलने वाले लोगों को आगाह करते हुए वे कहते हैं –

"मत रंगो देश की आजादी को
उस रंग की तुमको खबर नहीं
अन्दाज नहीं मैं जो कहता हूँ
उसको कल तुम मानोगे, यदि आज नहीं।"[62]

साधनों की पवित्रता के हिमायती महात्मा गांधी कष्ट देकर नहीं बल्कि कष्ट सहकर देश को आजाद कराना चाहते थे। इसके लिए वे आजीवन शुद्ध तार्किक, एकाग्र, कर्त्तव्यनिष्ठ और कष्टसहिष्णु बने रहे। अपने इन्हीं गुणों के बल पर उन्होंने मामूली भारतवासियों को

शेर बना दिया और इन शेरों ने अंग्रेज शासक रूपी हिंसक शेरों को ढेर कर दिया। हिंसा के बल पर आजादी प्राप्त करने की लालसा संजोने वाले लोगों को भवानीप्रसाद मिश्र ने चेतावनी देते हुए कहा था – मैं जो कहता हूँ उसको आज नहीं तो कल तुम अवश्य मानोगे कि पवित्र साधनों के बल पर आजादी दिला कर साधनों की पवित्रता के महत्त्व को साबित कर दिया। उनके द्वारा दिलायी गई आजादी साधनों की पवित्रता का ही फल है –

"तर्क शुद्ध, एकाग्र, सघन, कर्त्तव्यनिष्ठ, कष्टों के आदि
तुमने जैसे खेल-खेल में धर दी द्वारे पर आजादी
माटी के पुतलों को तुमने शेर कर दिया
बड़े-बड़े शेरों को तुमने ढेर कर दिया"[63]

महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व करते हुए साधनों की पवित्रता पर अत्याधिक बल दिया है। आजीवन गांधी पथ पर चलनेवाले गांधी विचारदर्शन से प्रभावित भवानीप्रसाद मिश्र ने अपने जीवन और साहित्य के माध्यम से पवित्र साधनों के बल पर स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु लोगों को प्रेरित किया। साधन की पवित्रता की गूँज उनकी अनेक कविताओं में सुनी जा सकती है। वे चाहते थे कि लोग स्वतंत्रता संग्राम में पवित्र साधनों को अपनाकर गांधी के बताये मार्ग का अनुसरण करें। हिंसा जैसे अपवित्र साधनों के बल पर स्वतंत्रता प्राप्ति को वे अनुचित मानते थे। अशुद्ध साधनों से उपलब्ध प्रगति को वे क्षणिक मानते थे। व्यावहारिकता के स्तर पर साधनों की पवित्रता को खंडित होते देखकर उनका हृदय व्यथित था। यही कारण है कि उनकी कविताओं में एक ओर स्वतंत्रता संग्राम में पवित्र साधनों को अपनाने का आह्वान है तो दूसरी ओर पवित्र साधनों का विरोध करने वालों के प्रति क्षोभ प्रकट हुआ है।

(ii) सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा :

सत्याग्रह :

सत्याग्रह महात्मा गांधी की विशिष्ट देन और उनके विचारदर्शन का केन्द्र बिन्दु है। स्वयं अवर्णनीय कष्ट उठाकर और मृत्यु का आलिंगन करके सत्य और अहिंसा पर अटल रहने की जिस कार्य पद्धति का विकास महात्मा गांधी ने किया उसे सत्याग्रह कहा जाता है। सत्याग्रह का अर्थ 'सत्य' के प्रति समर्पण या आग्रह है। इसमें अन्याय का सर्वथा विरोध करते हुए भी अन्यायी के प्रति वैरभाव नहीं होता। गांधीजी की दृष्टि में अन्याय को मिटाने का सच्चा तरीका यह है कि अपने कष्ट सहन और उच्च चरित्र द्वारा अत्याचारी की अन्तरात्मा और बुद्धि को प्रभावित करके उसके विचार बदले जाये और उसे स्वेच्छापूर्वक नई समाज व्यवस्था का सहायक बनाया जाये। सत्याग्रह या निष्क्रिय प्रतिरोध एक बूंद भी रक्त बहाए

बगैर दूरगामी परिणाम देने वाला एक उत्तम और कारगर उपाय है जो अत्याचारी का हृदय परिवर्तित कर उसे सही राह पर लाता है। सत्याग्रह की वकालत करते हुए महात्मा गांधी ने कहा है – "मेरा निश्चित मत है कि निष्क्रिय प्रतिरोध कठोर से कठोर हृदय को भी पिघला सकता है।"[64] सत्याग्रह में सभी प्रकार की हिंसा वर्जित है विरोधी के प्रति द्वेष भाव रखना या उसके बारे में कठोर वचनों का प्रयोग भी सत्याग्रह को तोड़ना है। सार रूप में, सत्याग्रह राजनीतिक या राष्ट्रीय जीवन में सत्य और शालीनता की प्रतिष्ठा है, जिसका प्रयोग महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता संग्राम में अंग्रेजों के विरुद्ध किया। उन्होंने सत्याग्रह के बल पर अंग्रेजों को यह अहसास कराया कि वे विदेशी हैं और उन्हें भारत पर शासन करने का कोई अधिकार नहीं है। स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गांधी के कार्यकलापों को भवानीप्रसाद मिश्र ने प्रत्यक्ष रूप से देखा। स्वतंत्रता संग्राम में देश का नेतृत्व करते हुए महात्मा गांधी ने सत्याग्रह को अपना प्रमुख अस्त्र बनाया। गांधी के विचार और कार्य कवि के हृदय में अंदर तक रिसते गए। परिणाम स्वरूप वे उनकी रचनाओं में अत्यन्त सूक्ष्मता से अभिव्यक्त हुए हैं।

आत्मा का बल सत्याग्रह शारीरिक बल से श्रेष्ठ है। यह न तो किसी को पीड़ा पहुँचाता है और न ही इसके इस्तेमाल में असफलता की कोई गुंजाइश रहती है। भवानीप्रसाद मिश्र सत्याग्रह को आत्मा की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति होने के कारण सबसे बड़ी शक्ति मानते हैं। वे कहते हैं –

"सत्याग्रह सबसे बड़ी शक्ति है क्योंकि यह
आत्मा की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति है।"[65]

स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व करते हुए महात्मा गांधी ने भारतीय जनता को हिंसा तथा रक्तपात की राह से हटकर अहिंसा, प्रेम, करुणा, सहानुभूति और भाईचारे की राह दिखाई। वे शत्रु को चारों ओर से छकाने-थकाने के लिए सत्याग्रह तथा सविनय अवज्ञा जैसे प्रबल अस्त्रों का प्रयोग कर रहे थे। गांधीजी ने सत्याग्रह की राह पर चलकर अहिंसा और प्रेम से मानव को जीतने और बदलने का संकल्प करवाया था। यह संकल्प ही भवानीप्रसाद मिश्र की कविता का मूलाधार बना और उन्होंने छायावाद के रेशमी गीतों को छोड़कर जनता की भाषा में खादी की कविता लिखकर सत्याग्रह को जन-जन तक पहुँचाया। सत्याग्रह के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित कराने के लिए उन्होंने अपनी कविताओं में सत्याग्रह के गुणों को उजागर किया। वे चाहते थे कि जनमानस में सत्याग्रह की भावना का सम्प्रसार हो और सत्याग्रह की राह पर चलकर अंग्रेजों के चंगुल से भारत को स्वतंत्र कराया जाये। यही कारण है कि भारतीय जनमानस में स्वातंत्र्य चेतना जागृत करने के लिए उन्होंने अपनी कविताओं में अनेक स्थलों पर सत्याग्रह की महिमा का गुणगान किया है।

गांधी के मतानुसार, "निष्क्रिय प्रतिरोध या सत्याग्रह दुर्बल मनुष्य का शस्त्र नहीं है। शारीरिक प्रतिरोध करने वाले की अपेक्षा निष्क्रिय प्रतिरोध करने वाले में कहीं ज्यादा साहस होना चाहिए।"[66] गांधी के विचारों से प्रभावित होने के कारण भवानीप्रसाद मिश्र का भी मानना है कि सत्याग्रह की राह पर चलने वाला व्यक्ति निर्भयी होता है वह ईश्वर की शक्ति के अलावा किसी भी शक्ति का भय नहीं मानता –

"वह निर्भय है जो सत्याग्रह का हामी है
भय उसको केवल है उसका
जो सकल जगत का स्वामी है"[67]

इतना ही नहीं सत्याग्रह एक जीवन पद्धति है और इस पद्धति पर चलने वाला जीने की कला ही नहीं सिखाता बल्कि व्यक्ति को गौरव से मरने की दिशा दिखाता है। यथा –

"कला अगर जीने की सत्याग्रही सिखाता है
तो गौरव से मरने की वह दिशा दिखाता है"[68]

सत्याग्रह एक अचूक अस्त्र है जो कभी असफल नहीं होता। सत्याग्रह रूपी अस्त्र का इस्तेमाल करने वाला अगर सच्चा हो तो, रक्त की एक बूंद भी बहाये बिना, यह दूरगामी परिणाम देता है। पर इसके लिए यह आवश्यक है कि सत्याग्रही भयरहित भाव से, विरोधी पक्षों के बीच जाकर बिना रक्तपात किये संग्राम करे। महात्मा गांधी को सत्याग्रह रूपी अस्त्र की सफलता पर रंच मात्र भी संदेह न था। उन्होंने स्पष्ट कहा है – "एक ही पूर्ण प्रतिरोधकर्त्ता बुराई के विरुद्ध अच्छाई की विजय के लिए काफी है।"[69] इतना ही नहीं सत्याग्रह की सफलता पर पूर्ण विश्वास प्रकट करते हुए उन्होंने तो यह भी कहा है – "सद्गुण की भाँति यह अपना पुरस्कार स्वयं है। आत्मा के बल के इस्तेमाल में असफलता की कोई गुंजाइश नहीं है।"[70] गांधी के अनुयायी कवि भवानीप्रसाद मिश्र को गांधी के विचारों में पूर्ण आस्था थी। उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लेने के साथ-साथ अपनी कविता के माध्यम से सत्याग्रह को आगे बढ़ाया। महात्मा गांधी की भाँति उन्हें भी पूर्ण विश्वास था कि झूठ के मुकाबले यदि एक भी सच्चा सत्याग्रही खड़ा हो जाये तो सच की जीत उतनी ही सुनिश्चित है जितना कि यह निश्चित है कि एक और एक मिलकर दो होते हैं –

"यदि एक भी सच्चा सत्याग्रही हो
तो झूठ के मुकाबिल में

सत्य की जीत उतनी ही निश्चित है
जैसे एक और एक दो"[71]

संसार में प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्र रहने का अधिकार है। व्यक्ति को स्वतंत्रता से वंचित करके संभवतः किसी समाज की रचना नहीं की जा सकती। महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता के मूल्य को समझा था। स्वतंत्रता के सम्बन्ध में अपने विचारों को प्रकट करते हुए उन्होंने कहा है – "मेरी निश्चित धारणा है कि व्यक्ति केवल अपनी दुर्बलता के कारण ही अपनी स्वतंत्रता खोता है।"[72] अत्याचारी अपने शिकार के सहयोग के बिना अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो सकता। शासक कितना भी अत्याचारी क्यों न हो अपने शासितों की सहमति के बगैर नहीं चल सकता। यह अवश्य है कि यह सहमति वह प्रायः बल प्रयोग के द्वारा प्राप्त करता है। भारत पर अंग्रेजों का शासन भी बल प्रयोग के कारण था और उसमें कहीं-न-कहीं भारतवासियों की सहमति थी। भारतवासियों ने प्रतिरोध के परिणामों को भुगतने के बजाए अंग्रेजों के अत्याचार को सहन करते हुए उनके समक्ष घुटने टेक दिए। महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व करते हुए देशवाशियों को यह समझाने का प्रयास किया कि आजादी और गुलामी मानसिक स्थितियाँ है। उन्होंने लोगों को आजादी का रास्ता दिखाते हुए कहा – "जब गुलाम यह संकल्प कर लेता है कि वह अब गुलामी नहीं करेगा तो उसी समय उसकी जंजीरे टूट जाती है। वह आजाद हो जाता है और दूसरों को भी आजादी का रास्ता दिखा देता है।"[73] अर्थात् भारतवासियों द्वारा अंग्रेजों की गलत नीतियों को मानने से इनकार करना उनका विरोध करना होगा। भवानीप्रसाद मिश्र भी गांधी के इन विचारों से पूर्णरूपेण सहमत थे। अपनी कविता के माध्यम से गांधी के विचारों को प्रकट करते हुए उन्होंने गांधी के विचारों को जन-जन तक पहुँचाया। उन्होंने लोगों को बताया कि अत्याचारों को सहन करना आदमी को कायर बनाता है। इसलिए मनुष्य को विरोध करने की स्थिति में विरोध करने से पीछे नहीं हटना चाहिए, चाहे इसके लिए व्यक्ति को कष्ट सहन करना पड़े या जान गंवानी पड़े। पर इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि दुश्मन को किसी प्रकार का कष्ट या पीड़ा नहीं होनी चाहिए। यथा –

"विरोध करने की घड़ी में चुप रहना
अपने और दूसरों पर होने वाले
अत्याचारों को चुपचाप सहना
आदमी को कायर बनाता है
जान के चले जाने से भला
क्या चला जाता है?

विरोध की घड़ी में विरोध करो
विरोध करते हुए जियो
विरोध करते हुए मरो!"[74]

उपवास सत्याग्रह के शस्त्रागार का एक अत्यन्त शक्तिशाली अस्त्र है। जब शिकायत दूर करवाने के और सब उपाय विफल हो जाते हैं तो सत्याग्रही अंतिम उपाय के तौर पर उपवास या अनशन करता है। महात्मा गांधी ने भारत को अंग्रेजों के चंगुल से मुक्त कराने के लिए अनेक बार उपवास या अनशन का सहारा लिया। कवि भवानीप्रसाद मिश्र भी उपवास को सत्य के आग्रही का सर्वोपरि इष्ट मानते हैं। इसीलिए बिना खाये मरने को शिष्ट बताते हुए वे कहते हैं –

"खाकर मरने से बिना खाये मरना
शिष्ट है – और यह तो
सत्य के आग्रही का सर्वोपरि इष्ट है।"[75]

धरना प्रदर्शन भी सत्याग्रह का ही एक रूप है। इसमें सत्याग्रही अत्याचार का विरोध करने के लिए शांतिपूर्ण ढंग से पूर्व निर्धारित स्थल पर बैठकर जनमत को प्रभावित करने का प्रयास करता है। जब अंग्रेज सरकार ने भारतवासियों से पूछे बगैर भारतवासियों के हिस्से का अनाज विदेशों में निर्यात कर दिया तो गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र ने सत्याग्रह की भावना से सड़कों पर अंग्रेज सरकार का विरोध करते भारतवासियों का चित्र अपनी कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत किया। यथा –

"अन्नहीन, भाषाहीन आशान्वित डरों की तरफ
सड़कों पर मिलेंगे हमें, सड़कों पर दिखेंगे हमें
ऐसे अनेक दृश्य जिनमें से एक-एक दृश्य
छाती को फाड़ दे
आँखों में लगा दे आग मन को बिगाड़ दे।"[76]

महात्मा गांधी का यह सत्याग्रह आन्दोलन एक व्यक्ति का नहीं, जन-जन का आन्दोलन था। सम्पूर्ण देश ने राष्ट्रीयता के रंग में रंग कर आन्दोलन को और उत्साह से भर दिया था। गांधी के नेतृत्व में होने वाले इस आंदोलन के दौरान धन संग्रह करने के लिए तिलक स्वराज कोष की स्थापना की गई। आन्दोलन के आरंभ होते ही सम्पूर्ण भारत की जनता ने बहुत उत्साह के साथ अपनी भागीदारी दर्ज करायी। कई स्थानों पर तो माताओं एवं बहनों ने भी सहयोग करते हुए अपने आभूषण तिलक स्वराज कोष में दानस्वरूप दिए। बहनों की इसी भागीदारी का बखान करते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"किरनों के हार हमारा देश नहीं पहने
तो अंधकार में होंगे क्या कंचन गहने
इसलिए स्वर्ग की सुविधा को बहनों ने आज लुटाया है।"[77]

निष्कर्षतः भारत पर ब्रिटेन का शासन असत्य पर आधारित था और यही कारण था कि सत्य के प्रति आग्रह रखने वाले महात्मा गांधी ने उनका पूरजोर विरोध किया, पर ऐसा करते हुए भी उन्होंने यह प्रयास किया कि अंग्रेजों को किसी प्रकार का कष्ट न हो। उन्होंने सत्याग्रह की राह पर चलते हुए असहनीय कष्ट सहे। वे सत्याग्रह के बल पर भारत को स्वतंत्र कराना चाहते थे और किसी भी स्थिति में अपने शत्रु पर कोई आँच न आने देकर स्वयं को सहर्ष समर्पित करने के लिए उद्यत रहे। स्वतंत्रता संग्राम में गांधी के नेतृत्व का समर्थन करते हुए गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र ने अपनी कविता के माध्यम से लोगों को यह बताया कि सार रूप में सत्याग्रह और कुछ नहीं बल्कि राजनीतिक यानी राष्ट्रीय जीवन में सत्य और शालीनता की प्रतिष्ठा है। वे सत्याग्रह ऐसी जीवन पद्धति मानते हैं जो जीने की कला सिखाने के साथ-साथ व्यक्ति को गौरव से मरने की दिशा भी दिखाती है। उन्होंने अपनी कविता के माध्यम से सत्याग्रह को आगे बढ़ाया।

सविनय अवज्ञा :

वैधानिक आन्दोलन का विशुद्धतम रूप सविनय अवज्ञा नागरिक का जन्मजात अधिकार है। इसमें कभी अराजकता उत्पन्न नहीं होती। पर यह अधिकार सिर्फ अनुचित तथा अन्यायपूर्ण नियमों की अवज्ञा तक सीमित है। अच्छे तथा न्यायोचित नियमों की अवज्ञा का अधिकार किसी को भी नहीं है। समाज के नियमों के विवेकपूर्वक पालन को जो व्यक्ति अपना पवित्र कर्त्तव्य मानता है वह उचित और अनुचित के निर्णय की स्थिति में आ जाता है। महात्मा गांधी विवेकपूर्वक और स्वेच्छा से समाज के नियम पालन को अपना कर्त्तव्य मानते थे। इसलिए वे जानते थे कि सरकार का कौन सा निर्णय सही है और कौन सा गलत। इसी आधार पर उन्होंने अंग्रेज सरकार के गलत निर्णयों का कड़ाई से विरोध करते हुए सविनय अवज्ञा की राह अपनायी। गांधीजी के अनुसार – "अवज्ञा सविनय तभी मानी जा सकती है, जब वह सच्चे हृदय से की जाए, आदरभाव लिए हो, सयंमित हो, कभी उद्धत रूप ग्रहण न करे, सुस्थापित सिद्धान्तों पर आधारित हो। स्वेच्छाचारिता के दोष से मुक्त हो और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उसके पीछे कोई द्वेष या घृणा की भावना न हो।"[78] गांधी ने सविनय अवज्ञा के इसी विशुद्धतम रूप को स्वीकार कर इसके अनुरूप अंग्रेज सरकार के खिलाफ सविनय अवज्ञा आन्दोलन की शुरूआत की। उन्हें पता था कि यदि सविनय अवज्ञा पर पूरी ईमानदारी से दृढ़ रहा जाए तो उग्र-से-उग्र अवज्ञा भी हिंसा को नहीं भड़काएगी।

महात्मा गांधी भारत पर अंग्रेजों के शासन को अनैतिक मानते थे। उन्होंने अंग्रेजों के हर उस कानून का विरोध किया जो गलत था। पर उनका यह विरोध सविनय था। गांधी विचारधारा के कवि भवानीप्रसाद मिश्र ने गांधीजी के सविनय अवज्ञा सिद्धान्त को अपनी कविताओं के माध्यम से आगे बढ़ाया। उन्होंने अपनी कविता के माध्यम से गांधीजी की भाँति अंग्रेजों की हर उस आज्ञा की अवज्ञा की जो उनकी नजर में न्यायोचित नहीं थी। वे स्पष्ट कहते हैं –

"तुम जो कह रहे हो वह मुझे ठीक नहीं
लग रहा है इसलिए मैं ना
कह रहा हूँ और कहता चला जाऊँगा"[79]

अंग्रेजों को यह अहसास कराने के लिए कि भारत में उनका शासन अनैतिक और अन्यायपूर्ण है, महात्मा गांधी ने उनके खिलाफ सविनय अवज्ञा आन्दोलन प्रारम्भ किया। असहयोग इसी की प्रशाखा है। उनका मानना था कि अंग्रेज सरकार का कोई भी कानून जिससे भारतवासियों का अहित हो उसकी सविनय अवज्ञा की जाए। गांधीमत के अनुरूप सविनय अवज्ञा और असहयोग के अक्षरशः पालन पर बल देते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"भारत छोड़ो का अर्थ हमारा उनसे पूरा असहयोग
हम उनकी सत्ता को माने अपने शरीर का परम रोग
परहेज करें हर गलती से जो सही उसी को अपनायें
जो बात रोग को ताकत दे हम उससे कोसों हट जायें"[80]

यहाँ महात्मा गांधी की भाँति भवानीप्रसाद मिश्र अंग्रेजों की सत्ता को अनैतिक मानकर भारतवासियों से उसके विरोध का आह्वान करते हैं।

अंग्रेज शासक केवल बल प्रयोग जानते थे। अतएव महात्मा गांधी चाहते थे कि उन्हें ईंट का जवाब पत्थर से दिया जाए; पर उन्होंने शस्त्रों के प्रयोग की अपेक्षा नैतिक अन्तःसामर्थ्य जगाने पर अधिक बल दिया। शासनकर्त्ता जब जनमत को ताक पर रखकर अड़ियल रवैया अपनाते हैं तो साधारण जनता में असंतोष और निराशा व्याप्त हो जाती है। इसी असंतोष और निराशा को हिंसा में परिवर्तित न होने देने की दृष्टि से महात्मा गांधी इस असन्तोष को शान्तिपूर्ण तरीके से रास्ता देने के पक्ष में थे। उन्होंने इसी विकल्प के तौर पर सविनय अवज्ञा की अवधारणा को प्रस्तुत किया था। वैयक्तिक साहसिक कृत्यों के बजाय शान्तिपूर्ण सामूहिक प्रतिकार ही उसकी आत्मा थी। मूलतया भारत पर अंग्रेजों की हुकूमत ही अनैतिक है। सरकार के अनैतिक कानूनों और आदेशों का पालन कर हम जुल्मी सरकार

की सहायता ही करते हैं। अतः हर सत् प्रवृत्त आदमी को अपनी समूची मानसिक शक्ति के साथ सरकार से टक्कर लेनी चाहिए। इसी राह पर चलते हुए सविनय अवज्ञा आन्दोलन के तहत महात्मा गांधी ने अंग्रेजों की हुकूमत को अनैतिक मानकर सत्ता को शक्ति प्रदान करने वाली पुलिस, सेना, शालाएँ और अदालतों का विरोध कर सरकार के ढाँचे को अहिंसक ढंग से ठप्प करने का आह्वान आम जनता से किया। गांधीजी के इस आह्वान को भवानीप्रसाद मिश्र ने कविता के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया। यथा -

"सत्ता की शक्ति पुलिस, सेना शालाएँ और अदालत हैं

हम इनको अगर छोड़ दे तो सत्ता बिल्कुल बेताकत है।"[81]

किसी भी कानून के प्रति भक्ति तभी सम्भव है जब वह नैतिक हो और उसे प्रजातान्त्रिक तरीके से बनाया और लागू किया गया हो। अनैतिक कानून की अवज्ञा वास्तव में उच्च नैतिक नियम अर्थात् सत्य का पालन करना ही है। यही कारण है कि भवानीप्रसाद मिश्र शासन के हर उस निर्णय की सविनय अवज्ञा करते है जो गलत और अन्यायपूर्ण है। वे स्पष्ट घोषणा करते हैं –

"सीमाओं से इनकार करने का मतलब है

जो कुछ सीमा है त्रुटि है गलत है अन्याय है

उसकी सविनय अवज्ञा उससे असहयोग"[82]

सविनय अवज्ञा या असहयोग वैधानिक आन्दोलन का विशुद्धतम रूप है। अहिंसा इसकी प्रथम शर्त है। हिंसा के वातावरण में ये न तो सफल हो सकता है और न ही अराजकता को जन्म देता है। गांधीजी के अनुसार – "जब सविनय प्रतिरोधी किसी से घृणा नहीं करता, शस्त्र का प्रयोग नहीं करता तो अराजकता फैलाने का प्रश्न ही नहीं उठता।"[83] यह प्रतिरोधी के विद्रोह को अहिंसक ढंग से प्रकट करता है। यही कारण है कि कवि भवानीप्रसाद मिश्र अहिंसा को मूलमंत्र मानकर महात्मा गांधी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन को सफलता के सोपान तक चढ़ाने के लिए चरखा, चक्की और घानी के बल पर शान्त होकर दफ्तरों के बाहर धरना देकर असहयोग की बात करते हैं। उनका मानना है कि पहले हमने मन लगाकर ढंग से यह काम किया होता तो अंग्रेज कबके भारत छोड़कर चले गए होते –

"यदि हम चरखा चक्की घानी के बल पर असहयोग करते

रहकर यदि बिल्कुल शांत दफ्तरों पर केवल धरना धरते"[84]

निष्कर्षतः भारत पर अंग्रेजों के शासन को अनैतिक मानकर महात्मा गांधी ने उनका सविनय विरोध किया। महात्मा गांधी के परम अनुयायी भवानीप्रसाद मिश्र ने उनके सुर-

में-सुर मिलाते हुए अपनी कविताओं के माध्यम से गांधीजी के आह्वान को जन-जन तक पहुँचाया। उन्होंने सत्य का पालन करते हुए शासन के हर गलत, अन्यायपूर्ण और अनैतिक निर्णय की सविनय अवज्ञा की घोषणा की।

निष्कर्षतः महात्मा गांधी पवित्र साधनों के बल पर देश को आजाद कराना चाहते थे। गांधी विचारधारा के अनरूप जीवन यापन करने वाले कवि भवानीप्रसाद मिश्र चाहते थे कि लोग स्वतंत्रता संग्राम में साधनों की पवित्रता ध्यान रखते हुए महात्मा गांधी के बताये मार्ग का अनुसरण करें। अशुद्ध साधनों से प्राप्त स्वतंत्रता को वे क्षणिक मानते थे। इसलिए उनकी कविताओं में स्वतंत्रता संग्राम में पवित्र साधनों को अपनाने का आग्रह है। अगर कहीं साधनों की पवित्रता खंडित होती है तो उनका हृदय व्यथित होता है। साधनों की पवित्रता को बनाये रखने के लिए महात्मा गांधी ने सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा को अपना प्रमुख अस्त्र बनाया और भवानीप्रसाद मिश्र ने इन्हें अत्यन्त शक्तिशाली बताते हुए अपनी कविताओं के माध्यम से आगे बढ़ाया। इतना ही नहीं उन्होंने अपनी कविताओं में सत्य की प्रतिष्ठा करते हुए अंग्रेजी शासन के हर गलत, अन्यायपूर्ण और अनैतिक निर्णय की सविनय अवज्ञा की घोषणा भी कर दी।

(घ) रामराज्य का आदर्श :

महात्मा गांधी का युग भारतीय पराधीनता का युग था। पराधीनता के युग में लगातार हो रहे शोषण के परिणामस्वरूप देश की अवस्था शोचनीय एवं असहाय थी। राजनीति के क्षेत्र में चालाकी, धोखाधड़ी, कुटीलता एवं असत्य का बोलबाला था। ऐसे समय में महात्मा गांधी ने अपने राजनीतिक एवं सामाजिक जीवनादर्श को तुलसीकृत रामायण के रामराज्य के अनुरूप स्वीकार किया। गांधीमत में यह एक आदर्श राज्यव्यवस्था या समाजव्यवस्था का नाम है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति समान स्वतंत्रता से जीवन-यापन करता है। हरिभाऊ उपाध्याय के मतानुसार – "जैसे 'सत्याग्रह' गांधीजी का जीवनादर्श, 'सर्वोदय' सामाजिक आदर्श है वैसे ही 'रामराज्य' उनका शासनादर्श है।"[85] महात्मा गांधी का रामराज्य से अभिप्राय उस समान अहिंसक प्रजातांत्रिक व्यवस्था से था जो नैतिक मूल्यों पर आधारित है। सामाजिक दृष्टि से इसका स्वरूप पारिवारिक है। इसमें सभी समान हैं। किसी प्रकार के भेदभाव के लिए इसमें स्थान नहीं है। राजनीतिक दृष्टि से यह सच्चा और पूर्ण प्रजातंत्र है। इसमें किसी प्रकार की लिंग, जाति, धर्म, भाषा, प्रदेश, रंग, सम्पत्ति आदि अनुचित असमानताएँ नहीं है। इसमें भूमि तथा राजनीतिक संस्थाएँ लोगों की हैं। महात्मा गांधी के अनुसार "मेरे सपने के रामराज्य में राजा और रंक, दोनों के अधिकार समान होते हैं।"[86] इसमें व्यक्ति समस्त स्वतंत्रताओं का उपभोग करता है। यह रामराज्य न्याय का राज्य

है जिसमें सबको पूर्ण और शीघ्र न्याय मिलता है। 'यंग इंडिया' में महात्मा गांधी ने स्पष्ट लिखा है – "मेरी कल्पना के रामराज्य कभी इस पृथ्वी पर रहे हो या न रहे हो, रामराज्य का प्राचीन आदर्श निस्संदेह एक सच्चा लोकतंत्र है जिसमें क्षुद्रतम नागरिक भी लंबी-चौड़ी और महंगी प्रक्रिया के बिना शीघ्र न्याय पा सकता है।"[87] वास्तव में रामराज्य की अवधारणा के माध्यम से महात्मा गांधी एक ऐसे लोकतंत्र की स्थापना करना चाहते थे जिसकी सारी कार्यवाही सत्य पुर आधारित हो और प्रत्येक नागरिक बिना किसी रोक-टोक के अपनी अन्तरात्मा के प्रकाश में सत्य का अनुसरण कर सकेगा। इसमें त्याग और सेवा का शासन होगा।

संत तुलसी के जिस रामराज्य को महात्मा गांधी ने अपना शासनादर्श माना वह वास्तविकता के धरातल पर हमारे देश में कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता। गांधी के जीवनकाल और उसके बाद उनके इस आदर्श की जो दुर्गति हुई उसे देखकर गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र का हृदय विदीर्ण हो गया। इसलिए उनकी रचनाओं में रामराज्य के वर्णन की अपेक्षा उसके विलुप्त होने की वेदना की अभिव्यक्ति अधिक हुई है।

महात्मा गांधी ने नैतिक मूल्यों पर आधारित अहिंसक प्रजातांत्रिक व्यवस्था की कल्पना की और उसे रामराज्य कहकर पुकारा। उनके सपनों का यह रामराज्य वास्तविकता में तभी परिणत हो सकता था जब पूरे भारतवासी एक साथ मिलकर सत्य अहिंसा और स्नेह के मूल्यों को अपने जीवन में उतारने का प्रयास करते। महात्मा गांधी अपने जीवन काल में अपने कार्यों और विचारों द्वारा रामराज्य की स्थापना हेतु देशवासियों को लगातार प्रेरित और प्रोत्साहित करते रहे। उनका मानना था कि किसी भी कार्य को यदि हम अपनी शक्ति और स्नेह के बल पर पूर्ण करने का प्रयास न करें, तो वह मात्र स्वप्न बनकर रह जाता है। परन्तु महात्मा गांधी ने अपने स्वप्नों को कल्पना के महल मानने से इनकार करते हुए अपने स्वप्नों को पूरा करने का अथक प्रयास किया। रामराज्य से सम्बन्धित गांधी के इन्हीं विचारों को कविता के माध्यम से अभिव्यक्त करते हुए कवि भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"स्वप्न मेरे नहीं है कोई हवाई किले
वे यथाश्रय खिले हैं मेरे खिलाये
सदा बनकर फूल-फल फसलें
हम न दे यदि शक्ति अपनी स्नेह अपना
तो हमारा सत्य भी है एक सपना"[88]

रामराज्य प्रेम, अहिंसा और स्नेह का राज्य है। प्रेम, अहिंसा और स्नेह ही वह मूल कारण है जिसके चलते वहाँ के नागरिकों के मन में एक दूसरे के प्रति परस्पर, सहयोग की भावना है। वहाँ किसी के हृदय में किसी के प्रति ईर्ष्या और द्वेष का भाव नहीं है। चारों

तरफ शांति का साम्राज्य है। गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र चाहते हैं कि रामराज्य का यही प्रेम, अहिंसा और स्नेह हमारे देश की हर गली और हर घर में देखने को मिले। पर यह तभी संभव है जब हम देश की भावी पीढ़ी अर्थात् बच्चों को प्रेम, अहिंसा और स्नेह का पाठ पढ़ायें –

"राम राज्य है प्रेम अहिंसा स्नेह
इसे बखेरो गली-गली हर गेह !
यदि हमें वास्तविक शान्ति जंगल में लाना है
तो बचपन से ही इसके फूल खिलाना है।"[89]

रामराज्य में प्रजा को अपनी आवश्यकता के अनुरूप सभी वस्तुएँ उपलब्ध थी। इसलिए कोई भी नागरिक भविष्य के लिए धन या वस्तुओं का संचय नहीं करता था। वे सिर्फ उतनी वस्तुओं को प्रयोग में लाते थे जितनी उनकी वास्तविक जरूरतें थी। ताकि बची हुई वस्तुएँ जरूरतमंद लोगों के काम आए। कवि भवानीप्रसाद मिश्र रामराज्य की प्रजा की इसी अपरिग्रह की भावना को अपनाने का आग्रह भारतीय जनमानस से अपनी कविताओं के माध्यम से बार-बार करते रहे। 'हम' शीर्षक कविता में वे लिखते हैं कि हम अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखते हुए उतनी ही वस्तुओं का प्रयोग करें जिससे हम वस्तुओं पर बोझ न बने। यथा –

"हम उतने और ऐसे रहें
जितने और जैसे में तत्त्व हमें
अपने ऊपर का भार न कहें"[90]

रामराज्य में लोग आपस सें मिलजुलकर रहते थे। लोगों में आपस में कोई बैर-भाव नहीं था। वहाँ न कोई दरिद्र था न कोई दुःखी अर्थात् न गरीबी, न दुःख, न किसी की उपेक्षा। केवल मानवता के मानव मूल्यों का सृजन था रामराज्य। पर आज परस्पर स्नेह और सहयोग की भावना अलौकिक हो जाने के कारण कहीं देखने को नहीं मिलती। लोग एक दूसरे को चोट पहुँचाने में संलग्न हैं। आजादी के बाद महात्मा गांधी के सपनों के इस राज्य की परिणति से गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र क्षुब्ध हैं। एक दूसरे के सहयोग के स्थान पर एक दूसरे के लिए निराशा के बीज बोते भारतीय जनमानस को देखकर उनका मन व्यथित है। अपनी इसी व्यथा को वाणी देते हुए कवि कहते हैं –

"हम एक दूसरे में निराशा बोते हैं
इस तरह न आज के होते हैं न कल के

x x x x

तरल और स्वच्छ स्नेह अलौकिक हो गया है
पत्थरों की तरह भरे बन्द बोरों की तरह हम हो गये हैं भारी
और खुले अगर तो सिर्फ चोट पहुँचाये

x x x x

चोट पहुँचाये सिर्फ एक-दूसरे को स्वतंत्र होकर"[91]

रामराज्य के सभी नर-नारी परोपकारी थे। संकट के समय लोग एक दूसरे की सहायता करने के लिए सदा तत्पर रहते थे। परोपकार की इस भावना के पीछे उनका कोई स्वार्थ नहीं होता था। वे निस्वार्थ भाव से परस्पर सहयोग करते थे। परन्तु रामराज्य के नागरिकों की यह विशेषता हमारे समाज में दूर-दूर तक कहीं दिखाई नहीं पड़ती। हमारे चारों ओर लूट-खसोट व्याप्त है। लोग अपने स्वार्थ के खातिर दूसरों को हानि पहुँचाने में भी पीछे नहीं रहते। प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था जहाँ समाज के सभी लोग समान है। समाजहित सर्वोपरि है। व्यक्ति अपने हित से पहले दूसरों के हित के बारे में सोचता है। पर आज स्थिति पूरी तरह से बदली हुई है। व्यक्ति अपने हित के लिए दूसरों के हितों को कुर्बान कर देता है। महात्मा गांधी ने रामराज्य के अन्तर्गत जिस प्रजातंत्र की कल्पना की थी वह आदर्श प्रजातंत्र था। प्रजातंत्र के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उन्होंने लिखा है – "प्रजातंत्र का अर्थ मैं यह समझता हूँ कि इस तंत्र में नीचे-से-नीचे और ऊँचे-से-ऊँचे आदमी को आगे बढ़ने का समान अवसर मिलता है।"[92] पर कवि भवानीप्रसाद मिश्र को ऐसा प्रजातंत्र कहीं दिखाई नहीं देता। वर्तमान प्रजातांत्रिक व्यवस्था में समाज को दरकिनार कर प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वार्थ की पूर्ति में लगा है। समाज की इसी स्थिति को बोझिल मन से अभिव्यक्त करते हुए कवि कहते हैं –

"इसे देखो समझो और गाओ यह प्रजातंत्र है
आदमी की व्यक्तिमत्ता जगाने का मंत्र है
इसे देख सुन समझकर आदमी आपे में आता है
वह समाज को पूरी तरह भूल जाता है"[93]

रामराज्य में अपराधी के लिए सजा का कोई प्रावधान नहीं था। वहाँ 'दंड' शब्द ऋषि-मुनियों के हाथ में धारण करने वाले डंडे के लिए प्रयुक्त होता था। परन्तु हमारे देश में आपातकाल के दौरान सारे नियम-कायदे और कानून को ताक पर रखकर तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के इशारे पर अनुशासन के नाम पर पुलिस और सेना ने नीरिह और निर्दोष लोगों पर जो जुल्म ढाया वह भूलाया नहीं जा सकता। आपातकाल में जनता

पर हुए अत्याचार ने रामराज्य की धज्जियाँ उड़ा दी। लोगों को उनके मौलिक अधिकारों से तो वंचित किया ही गया, इसके साथ-साथ वाक् स्वाधीनता भी खत्म कर दी। ऐसा लगने लगा कि एक ही व्यक्ति देश है और एक ही व्यक्ति प्रजा है। सत्ता के विरोध सें आवाज उठाने वाले को आतंकवादी संगठनों से जोड़कर जेल में बंदी बनाया गया। ऐसा करके सरकार ने प्रजातांत्रिक युग में प्रजा के अधिकारों का हनन किया। शासनकर्त्ताओं ने विद्रोह का दमन करने के लिए प्रेम के माध्यम से अनुशासन की स्थिति उत्पन्न न कर आतंक के माध्यम से प्रजा पर अनुशासन को आरोपित किया। यथा -

"कैसा मजा है मुँह खोला भर तैयार कोई सजा है
दुःशासन के अनुशासन पर्व कहो तो ठीक
पुलिस और सेना की क्रूरता पर गर्व करो तो ठीक
और यह भी कहो कि एक ही व्यक्ति
देश है एक ही व्यक्ति प्रजा है
यह कैसा मजा है!"[94]

तत्कालीन राजनीतिक भ्रष्टता पर तीखी टिप्पणी करते हुए कवि कहते हैं –

"बहुत नहीं थे सिर्फ चार कौए थे काले
उन्होंने यह तय किया कि सारे उड़ने वाले
उनके ढंग से उड़ें, रूकें, खायें और गायें
वे जिसको त्यौंहार कहें सब उसे मनायें।"[95]

रामराज्य की शासन व्यवस्था में मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी भी शांतिपूर्वक जीवन यापन कर रहे थे। लोग इतने उदार थे कि कोई किसी को हानी पहुँचाना तो दूर उसके बारे में विचार भी अपने मन में नहीं लाता था। गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र चाहते थे कि ऐसा ही वातावरण हमारे देश में कायम हो ताकि वे उसका वर्णन अपनी कविताओं में कर सके। पर ऐसा वातावरण कहीं दिखाई न पड़ने के चलते वे अपनी कविताओं में इसका वर्णन नहीं कर पाते हैं। हार्दिक इच्छा होते हुए भी उनकी हिम्मत जवाब दे जाती है और वे दुःखी मन से कहते हैं –

"हिम्मत नहीं पड़ती
कि जो दिखता नहीं वह लिखूँ
x x x x
मेरे चारों ओर लोग खुश हैं और पंछी भी
उदार है लोगों में मन खुशबू की तरह उड़कर

छूते हैं हृदय उनको"[96]

रामराज्य सच्चा लोकतंत्र था जहाँ सबको पूर्ण स्वतंत्रता थी। किसी पर किसी प्रकार का कोई प्रतिबन्ध नहीं था। वहाँ किसी के मन में किसी के प्रति हिंसा की भावना नहीं थी। सिंह जैसा हिंसक पशु भी वहाँ हिंसा से दूर रहता था। यही कारण है कि वहाँ बकरी और शेर एक ही घाट पर पानी पीते थे। आपसी प्रेम और अहिंसा का ऐसा उदाहरण अन्यत्र दुर्लभ है। पर आज आधुनिकता और पाश्चात्य सभ्यता ने हमारे देशवासियों को इतना स्वार्थपरायण बना दिया है कि वे एक दूसरे के शत्रु तो हैं ही इसके साथ-साथ उनकी हिंसात्मक प्रवृत्ति के प्रभावस्वरूप देश के पशु-पक्षी भी धीरे-धीरे लुप्त होते जा रहे हैं। अब देश एक ऐसे जंगल में परिणत होता जा रहा है जिसमें सिर्फ दरिन्दे ही दरिन्दे हैं। राम राज्य में वर्णित स्नेह, परोपकार, दया, सहयोग और मैत्री जैसे मानवीय मूल्यों का कहीं कोई नामोनिशान दिखाई नहीं देता। मानवीय मूल्यों के इस अभाव को कवि भवानीप्रसाद मिश्र बड़ी शिद्दत से महसूस करते हुए कहते हैं –

"अब मेरा देश समूचा का समूचा एक ऐसा जंगल है
जिसमें पंछी नहीं है हिरण नहीं है
नहीं है साँभर चीतल और नीलगाय
दरिन्दे ही दरिन्दे हैं अब इसमें"[97]

रामराज्य में लोग सम्पन्न और प्रसन्न थे। वातावरण भ्रष्टाचार रहित था। सभी सुरक्षित थे। लोग रचनात्मक कार्यों में व्यस्त थे। प्रजा की इच्छा महत्त्वपूर्ण थी और उसका सम्मान किया जाता था। वास्तव में 'रामराज्य' राजसत्ता नहीं लोकसत्ता थी। शायद इन्हीं सामाजिक और मानवीय मूल्यों को समझते हुए महात्मा गांधी ने 'रामराज्य' का स्वप्न देखा, जहाँ न्याय का शासन हो, समानता हो, आदर्श हो। परन्तु देश स्वतंत्र होने के बाद रामराज्य का यह दृश्य कहीं देखने को नहीं मिला। कवि भवानीप्रसाद मिश्र की गांधी और गांधी विचारधारा में पूर्ण आस्था थी। उन्हें आशा थी कि धीरे-धीरे लोग गांधी के आदर्शों को समझकर अपने जीवन में अपनायेंगे और उनके रामराज्य का स्वप्न साकार होगा। उन्हें आशा थी कि लोग सभ्य होंगे और एक दूसरे को सुख देने की इच्छा से एक दूसरे के निकट आयेंगे। पर समय गुजरता गया और समय के साथ रामराज्य का स्वप्न बिखरने लगा। गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र के लिए यह स्थिति अत्यन्त दुःखद थी। अपने इसी दुःख को अभिव्यक्त करते हुए वे कहते हैं –

"एक दो नहीं बरसों
मानता रहा कि बदल जायेगा कल-परसों तक सब कुछ

लोग बहुत जल्दी सभ्य हो जायेंगे
वे जब कभी भी एक दूसरे के पास आयेंगे
तो एक दूसरे को सुख देने की इच्छा से
x x x x
मन को भी यह ख्याल मूर्खता जैसा लगने लगा है।"[98]

पर इस दुःखद स्थिति को देखकर भी कवि निराश नहीं है। उनके हृदय में कहीं-न-कहीं आशा का दीप टिमटिमाता है। वे सोचते हैं कि किसी न किसी दिन तो भारतवासी परस्पर मिलजुल कर रहेंगे और रामराज्य की प्रजा की तरह एक दूसरे के दुःख दर्द को दूर करते हुए जीवन यापन करेंगे। उनका मानना है कि जिस प्रकार आकाश फूल को अपने अंक में पल्लवित और पुष्पित होने का अवसर देता है ठीक उसी प्रकार शायद किसी दिन भारतवासी भी परस्पर एक दूसरे के सहयोग के लिए आगे आयेंगे। जिस दिन ऐसा होगा उस दिन गांधी के रामराज्य का स्वप्न साकार होगा –

"क्यों नहीं रह सकते हम परस्पर
फूल और आकाश की तरह
यह नहीं हो सकता शायद और इसी का रोना है
या ऐसा भी किसी दिन होना है!"[99]

इसके साथ-साथ कवि आशावादी है कि गांधी के मार्ग पर चलकर हम रामराज्य की स्थापना कर सकते हैं। रामराज्य एक ऐसा राज्य था जहाँ दूध-दही की नदियाँ बहती थी। खेतों में फसल रूपी सोना लहलहाता था। चारों ओर हरियाली और खुशहाली छाई रहती थी। धरती अपनी सुषमा से देवताओं को भी आकर्षित करती थी। ऐसे ही रामराज्य की स्थापना की कल्पना करते हुए भवानीप्रसाद मिश्र लिखते हैं –

"दूध की नदियाँ बहे सोना खड़ा हो खेत में,
तब मजा आए कि हम सब्जा जमा दें रेत में;
बेशकीमत और प्यारा देश का कन-कन करें।
गाय अपनी नन्दिनी हो बैल नंदी नाथ हो
दूध की हर बूंद में जैसे सुधा का साथ हो
देवता भी उतर आने का यहाँ पर मन करे।"[100]

अपनी इसी आशावादिता के बल पर वे रामराज्य में वर्णित प्रकृति और मनुष्य के आपसी सहयोग की कल्पना करते हैं। जिस प्रकार रामराज्य में प्रकृति मानव के अनुकूल थी। मनुष्य की इच्छा मात्र से सूर्य-प्रकाश और ताप, चंद्रमा चाँदनी और बादल जल बरसा देते

थे ठीक उसी प्रकार फूल, पंछी, हवा और सरिता की लहरियों आदि प्रकृति के उपादानों द्वारा मनुष्य को सहारा देने की बात करते हुए कवि कहते हैं –

"तुमको सहारे की जरूरत
जब भी पड़ेगी फूल पंछी हवा
सरिता की लहरियों से कहे देता हूँ"[101]

निष्कर्षतः रामराज्य से महात्मा गांधी का आशय नैतिक मूल्यों पर आधारित उस अहिंसक प्रजातांत्रिक व्यवस्था से था, जिसमें सबको समान अधिकार प्राप्त थे। अपनी रामराज्य की परिकल्पना से महात्मा गांधी सत्य पर आधारित एक ऐसे आदर्श लोकतंत्र की स्थापना करना चाहते थे , जहाँ प्रत्येक नागरिक अपनी अन्तरात्मा के प्रकाश में सत्य का अनुसरण करे। रामराज्य प्रेम, अहिंसा और स्नेह का राज्य है। वहाँ किसी के हृदय में ईर्ष्या और द्वेष का भाव नहीं है। भवानीप्रसाद मिश्र रामराज्य की स्थापना के लिए इसी प्रेम, अहिंसा और स्नेह को भारत के हर गली और हर घर में देखना चाहते थे। पर आज प्रेम, अहिंसा, स्नेह आदि मानव मूल्य कहीं दिखाई नहीं देते। लोग एक दूसरे की भावनाओं को आहत करने में व्यस्त है। महात्मा गांधी के सपनों के रामराज्य की इस परिणति से भवानीप्रसाद मिश्र का हृदय व्यथित है। अपनी इस व्यथा को उन्होंने बोझिल मन से अपनी कविताओं में व्यक्त किया है। पर उन्हें विश्वास है कि आज नहीं तो कल भारतवासी परस्पर एक दूसरे के सहयोग के लिए आगे आयेंगे और उस दिन गांधी के रामराज्य का स्वप्न साकार होगा।

(ङ) सर्वोदय :

सर्वोदय गांधीजी द्वारा प्रतिपादित एक ऐसा विचार है जिसमें 'सर्वभूत हितेश्ताः' की भारतीय कल्पना सम्मिलित है। 'सर्वोदय' एक सामासिक शब्द है जो 'सर्व' और 'उदय' के योग से बना है। इसका अर्थ है सबका उदय और सब प्रकार से उदय। सर्वोदय का आदर्श है – अद्वैत। अद्वैत में विश्वास व्यक्त करते हुए महात्मा गांधी ने कहा है - "मुझे मानव की ही नहीं बल्कि प्राणिमात्र की अनिवार्य एकता में विश्वास है। इसलिए मेरा विश्वास है कि एक आदमी को आध्यात्मिक लाभ मिलता है तो उसके साथ सारी दुनिया का लाभ होता है और अगर एक आदमी का आध्यात्मिक पतन होता है तो उस सीमा तक सारी दुनिया का पतन होता है।"[102] एक आदमी को आध्यात्मिक लाभ होने पर उसके आस-पास के लोग दुःख भोगेंगे इस बात को उन्होंने सिरे से नकार दिया। वे समाज में सबके हित के आकांक्षी थे। वे चाहते थे कि वर्ग, वर्ण, धर्म, जाति, भाषा आदि के आधार पर न तो समाज में किसी का संहार हो और न ही बहिष्कार । सर्वोदय सर्वसेवा के माध्यम से समस्त प्राणियों की उन्नति

का मार्ग है, जिस पर लोग एक दूसरे का सहयोग करते हुए विकास के पथ पर अग्रसर हों। स्वभावतः सर्वोदय समाज की रचना में अंतिम व्यक्ति समाज की चिंता का पहला अधिकारी होता है।

सर्वोदय एक ऐसी आदर्श समाज व्यवस्था है जिसमें समाज के सभी सदस्य बराबर हैं। इस व्यवस्था में समाज के अधम, पापी, बच्चे, बूढ़े आदि के विकास की समान रूप से कामना की गई है। ज्यादा हथियाने और बटोरने के प्रयास का इसमें विरोध दिखाई पड़ता है। अगर लोग महात्मा गांधी द्वारा बतायी इस सर्वोदय की राह पर चल पड़ें तो अपने-आप नया समाज का उदय हो जाएगा। विषमता समाप्त हो जायेगी, स्पर्धा की जगह स्नेह का संचार होगा और शोषण की जगह सहयोग की भावना का विकास होगा। आदमी की शक्ति जो एक-दूसरे को गिराने और खींचने में लगी रहती है, वह एक-दूसरे को बढ़ाने और उठाने में काम आयेगी। इस प्रकार मानवकृत विषमता का अंत ही सर्वोदय का उद्देश्य है। जीवमात्र के लिए समादर और प्रत्येक व्यक्ति के लिए सहानुभूति ही सर्वोदय है। इसके लिए साधन शुद्धि प्रमुख है।

बिना किसी तर्क के गांधीवाद को स्वीकार करने वाले कवि भवानीप्रसाद मिश्र पर गांधीजी की इस सर्वोदयी विचारधारा का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। व्यक्ति जब बिना किसी तर्क के बात स्वीकार करता है तो वहाँ प्रश्न आस्था और विश्वास का होता है। गांधी वाङ्मय पर काम करते हुए उन्हें गांधीजी के विचारों, आदर्शों को जानने समझने का भरपूर अवसर मिला। यही कारण है कि उनकी कविताओं में गांधीजी के सर्वोदय सम्बन्धी विचारों का प्रभाव देखने को मिलता है। अद्वैत में अपने विश्वास के चलते महात्मा गांधी को प्राणीमात्र की अनिवार्य एकता में विश्वास था। गांधीजी की भाँति भवानीप्रसाद मिश्र का वैचारिक धरातल भी समानता और अद्वैत दर्शन की शाश्वतता के योग से निर्मित होने के कारण उनके हृदय में मनुष्य के साथ-साथ समस्त जड़-चेतन प्रकृति के सुख-दुःख के प्रति संवेदना के भाव हैं।

महात्मा गांधी एक ऐसी न्यायोचित समाज व्यवस्था की स्थापना करना चाहते थे जिसमें समाज के अधिक से अधिक लोगों का कल्याण हो। वर्ग भेद की समस्या खत्म हो। वे ऐसे समाज के विरोधी थे जिसमें बहुसंख्यक निर्धन हों और कुछ लोग धनी। ऐसे ही सर्वोदयी समाज के मंतव्य को स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा है – "सम्पूर्ण समाज का अधिकतम कल्याण और उन भयंकर असमानताओं का उन्मूलन जिनके परिणामस्वरूप लाखों-करोड़ों लोग निर्धन हैं और मुठ्ठीभर लोग धनी है।"[103] भवानीप्रसाद मिश्र ने गांधीजी ने इन विचारों को केवल सिद्धान्त के तौर पर ही हमारे सामने नहीं रखा बल्कि वास्तविक जीवन में भी अपनाया। गांधीजी के जन्मदिन के अवसर पर उनकी पत्नी ने मंगल चिह्न मानकर घी का दिया जलाया। परन्तु महात्मा गांधी ने इस घटना का यह कहकर विरोध

किया कि मेरे पड़ोस का किसान तेल की बूंद के लिए तरसता है ऐसी स्थिति में मेरे जन्मदिन के अवसर पर घी के दिये का क्या औचित्य है। इस प्रकार गांधीजी समाज में सबका उदय चाहते थे। गांधीजी के जीवन दर्शन से प्रभावित भवानीप्रसाद मिश्र ने बापू के जन्मदिवस पर घी का दीपक जला देने वाली घटना को अत्यन्त कारुणिक स्वर में चित्रित किया है –

"भला दीपक यह घी का मेरे जी को कैसे भा सकता है
जब मेरे पड़ोस का किसान घी तो क्या
तरस जाता है तेल की एक बूंद के लिए"[104]

महात्मा गांधी समाज में समानता की इस भावना को सत्य और अहिंसा की राह पर चलते हुए स्नेह के बल पर फैलाना चाहते थे। गांधी के इन्हीं विचारों को अभिव्यक्त करते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"है स्वतंत्रता अंश सत्य का सत्य अहिंसा से पाना है
सर्वोदय की किरण स्नेह के बल धरती भर फैलाना है।"[105]

महात्मा गांधी को समाज के दलित, पीड़ित और शोषित वर्गों के प्रति गहरी सहानुभूति थी। वे भारत को आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक दृष्टियों से ऊपर उठाना चाहते थे। गांधी विचारों को लेकर सर्वोदयी कवि भवानीप्रसाद मिश्र ने अनेक समाजोपयोगी कार्य किये हैं। किसान और मजदूरों की दयनीय स्थिति देखकर उनका हृदय कराह उठा। इसलिए सर्वोदयी कवि ने 'मंत्रियों का स्वागत' शीर्षक कविता में मंत्रियों का स्वागत करने के बजाय उन मजदूर, किसानों के भूखे, नंगे प्राणों को वाणी प्रदान की जिन्हें वर्षा में छाया और ठंड में ताप नहीं। उनके स्वागत गान में भी कवि को बेजुबान लोगों का दर्द और कराह सुनाई देती है –

"वर्षा में जिनके छाँह नहीं जाड़े में जिनके आग नहीं
दो वक्त पेट भर कर खा ले यह भी जिनके भाग नहीं"[106]

सत्य का उद्घोष करते हुए कवि गहरी व्यथा और पीड़ा के साथ कहते हैं कि चिंतन और क्रिया के बाद ही उपदेश शोभा देते हैं। पर हमारे देश में मंत्री और नेता इस बात को समझने का प्रयास नहीं करते। यदि हमारे नेता पीड़ित और शोषितों के हड्डियों के ढाँचों पर थोड़ा सा माँस बढ़ा सकें तो उन्हें मानवता का स्नेह मिलेगा और वे सही मायने में जनप्रतिनिधि कहलाने के अधिकारी होंगे –

"इस हड्डी के ढाँचे पर थोड़ा सा माँस बढ़ावें यदि

आप कहीं दम तोड़ रहे हो थोड़ी साँस बढ़ा दें
तो आप धन्य हो उठे आपको मानवता का प्यार मिले
अधिकार स्वयं हो सो धन्य यदि ऐसों को अधिकार मिले"[107]

भारत गांवों का देश है। गाँव के कृषकों की दयनीय स्थिति के प्रति महात्मा गांधी के हृदय में गहरी सहानुभूति थी। वे मनुष्य-मनुष्य के भेद को समाप्त कर सबको समानता का अधिकार दिलाना चाहते थे। इसलिए उन्होंने सबके प्रति समान दृष्टिकोण और सबके लिए समान अधिकारों की वकालत की। समानता का अधिकार मिलने पर ही गाँवों का विकास सम्भव है और महात्मा गांधी गाँवों के विकास को ही देश का विकास स्वीकार करते हैं। जब तक इस देश में गांव में रहने वाले लोगों का शोषण होता रहेगा तब तक देश का विकास नहीं हो सकता। पर व्यवहार में ठीक इसके विपरीत हो रहा है। गांधी के इस चिंतन को भवानीप्रसाद मिश्र ने भावात्मक स्तर पर गहरी संवेदना के साथ सूक्ष्मता से अंकित किया है। गाँव और वहाँ के किसानों का दृश्य प्रस्तुत करते हुए कवि कहते हैं –

"गांव इसमें झोपड़ी है, घर नहीं
झोंपड़ी के फटकियाँ है, दर नहीं है;
धूल उड़ती है, धुएँ से दम घुटा है,
मानव के हाथ से मानव लुटा है।"[108]

रात दिन कठोर परिश्रम कर धरती की छाती को चीरकर अन्न उपजाने वाले किसान और मजदूर को जब तक समाज में समानता का अधिकार नहीं मिलता तब तक सर्वोदय की स्थापना नहीं हो सकती। इसलिए कवि किसान की महिमा का गुणगान करते हुए कहते हैं कि बंजर,पहाड़ और धरती पर सर्वोदय तभी लहरायेगा जब धरती पर किसान शोषणमुक्त होकर निर्भयतापूर्वक जीवनयापन करेगा। यथा -

"सारी दुनिया तुम्हारी डगों के आगे छोटी है।
तुम्हारी जय हो! निर्भय हो किसान धरती पर
लहराये सर्वोदय बंजर में पहाड़ पर परती पर"[109]

समाज में सर्वोदयी लोकतंत्र की स्थापना तभी हो सकती है जब शासन व्यवस्था का संचालन जनसाधारण द्वारा होगा। ऐसी स्थिति में हर एक अपना राजा होगा और वह इस ढंग से अपने पर शासन करेगा कि अपने आस-पास के लोगों के लिए कभी बाधा नहीं बनेगा। महात्मा गांधी के अनुसार, "सच्चे लोकतंत्र का संचालन केन्द्र में बैठे हुए बीस आदमियों से नहीं हो सकता। उसका संचालन नीचे से प्रत्येक गाँव के लोगों द्वारा करना

होगा।"[110] कहने का तात्पर्य यह है कि समाज के पीड़ित और शोषित वर्ग के हाथ में सत्ता होगी तो सही मायने में समाज से शोषण का खात्मा होगा। सबको एक समान धूप-छाँह और सुख-दुःख मिलेगा। ऐसे ही वर्ग विषमता से मुक्त सर्वोदयी समाज की स्थापना का गीत गाते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"घायलों के राज में होंगे न घाव
सब सहेंगे धूप सब भागेंगे छाँव
सुख सभी का एक सबका शोक एक
सरग अथवा नरक सबका लोग एक
सब सबेरे साथ ही जग जायेंगे
सब सवेरे काम में लग जायेंगे
क्या मजे की बात होगी भाइयों
एक सबकी जात होगी भाइयों"[111]

राजा की दृष्टि में सब समान होते हैं। उसकी शासन व्यवस्था में जनता को समान रूप से लाभ मिलना चाहिए। राजा का पहला कर्तव्य भूखे के लिए भोजन और नंगों के लिए वस्त्र की व्यवस्था करना है ताकि भूखे, नंगे भी अन्य लोगों के साथ खड़े होकर समानतापूर्वक जीवनयापन कर सके। महात्मा गांधी का मानना था कि हमारे समाज में सर्वोदय की स्थापना तभी हो सकती है जब देश के करोड़ों लोगों के पेट में अन्न और अंग पर वस्त्र हो। भूखे, नंगे के लिए अन्न और वस्त्र की व्यवस्था किये बगैर समाज में समानता का दावा करना व्यर्थ है। गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र का तो मानना है कि शासनकर्ता या राजा अगर अपनी गरीब प्रजा के लिए अन्न और वस्त्र की व्यवस्था नहीं कर सकता है तो वह निपट अभागा है –

"अन्नहीन पेटों में दाने वस्त्रहीन देहों पर धागे
हमने नहीं जुटाये तो हम राजा होकर निपट अभागे"[112]

खेत खलिहान और कारखानों में रात-दिन परिश्रम करने वाले किसानों और मजदूरों के बल पर ही आज पूँजीपति वर्ग अथाह धन सम्पति का मालिक बन कर आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहा है। लगातार हो रहे शोषण के परिणामस्वरूप अगर किसान और मजदूर की शक्ति खत्म हो गई तो पूँजीपति वर्ग का भी खात्मा हो जाएगा। इसलिए समाज को सुचारु रूप से चलाने के लिए समाज में समानता की स्थापना आवश्यक है। अगर समाज को बचाना है तो हमें किसान और मजदूरों के हितों की चिंता करनी होगी। उन्हें

समाज में समानता का अधिकार देना होगा। यही कारण है कि भवानीप्रसाद मिश्र सर्वोदयी समाज की स्थापना के लिए शोषणहीन समाज की बात करते हैं –

"ये वे लोग हैं जिन्होंने तुम्हारे मकान बनाये
तुम्हें छाया दी जिन्होंने तुम्हें खेत और
खलिहान और कारखाने और तमाम वह माया दी
जिसके बल पर तुम गुलछर्रे उड़ाते हो

x x x x

वे नहीं रहेंगे तो तुम्हारा नाम भी
शेष रहेगा या नहीं, इसमें शक है

x x x x

शक्ति सारी और सब जगह इनकी है
अपने को बचाना है तो इनकी शक्ति बढ़ाओ"[113]

रात-दिन जी तोड़ मेहनत करने वाले करोड़ों किसान और मजदूरों के घरों में दीवाली के दिन भी दीपक नहीं जलते। जहाँ सम्पन्न घरों में रहने वाले लोग पर्व और उत्सव के अवसर पर तरह-तरह के पकवान बनाते हैं वहीं दूसरी ओर पीड़ित और शोषित ऐसे अवसरों पर भी चुपचाप भूख सहन करते है। समाज की इस विडम्बनापूर्ण स्थिति को देखकर सर्वोदयी कवि भवानीप्रसाद मिश्र का हृदय दुःखी है। उनका मानना है कि इन अभावग्रस्त लोगों को भी समाज में जीने का अधिकार है। इनके जीवन में सुख होना चाहिए। यथा -

"अच्छा नहीं है देश में
करीब दस-बीस करोड़ लोगों का
दीवाली के दिन भी अंधेरे में बैठे रह जाना
सम्पन्न भोजों की घड़ियों में चुपचाप भूख सह जाना
मार-मार कर ही सही अभाव ग्रस्तों को
थोड़ा बहुत गाने दीजिए"[114]

महात्मा गांधी सर्वोदय के सिद्धान्त के तहत सबका उदय चाहते थे। वे चाहते थे कि समाज का कोई भी व्यक्ति जीवन की मूलभूत जरूरतों से वंचित न हो। समाज में सबका समान रूप से विकास हो। परन्तु वास्तविकता में भेद लगातार बढ़ता जा रहा है। समाज में निम्न वर्ग के लोग आर्थिक दृष्टि से पिछड़ते जा रहे हैं तो उच्च वर्ग के लोगों के जीवन में सुख-सुविधा के साधन लगातार बढ़ते जा रहे हैं। महात्मा गांधी का सर्वोदय महज एक सिद्धान्त

बनकर रह गया। अधिकारलिप्सा के बढ़ने से शोषण की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिल रहा है। अभावग्रस्त निम्नवर्ग की चिंताजनक हालत का वर्णन करते हुए कवि भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"सब तरफ हाय-हाय है न गेहूँ है न चावल
न चीनी है न चाय है कोयला नहीं मिट्टी का तेल नहीं
ऐसे समय मनाना कोई त्योहार बेशक कोई खेल नहीं"[115]

महात्मा गांधी सर्वोदय सिद्धान्त के तहत सबका समान रूप से विकास चाहते थे। उनकी धारणा थी कि समाज के सबसे छोटे और निम्नतम वर्ग को भी अहिंसक तरीके से सामाजिक न्याय दिलाया जाये। वे समाज के अंतिम व्यक्ति तक का हित चाहते थे। उनका मानना था –"समाज के सभी सदस्य बराबर है – न कोई नीचा है, न कोई ऊँचा। आदमी के शरीर में, सिर इस कारण ऊँचा नहीं है कि वह शरीर में सबसे ऊपर स्थित है और पैर इसलिए नीचे नहीं है कि वे पृथ्वी को स्पर्श करते हैं। जिस प्रकार शरीर के सभी अंग बराबर है, उसी प्रकार समाज के सभी सदस्य भी बराबर हैं।"[116] इसमें राजा, रंक, मजदूर, किसान, अमीर-गरीब मालिक कर्मचारी बच्चे बूढ़े सभी का स्तर समान है। एक व्यक्ति को भी पीछे छोड़कर देश आगे नहीं बढ़ सकता। गांधीजी के सर्वोदय सम्बन्धी इन्हीं विचारों को कविता के माध्यम से अभिव्यक्त करते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"एक बच्चा भी पीछे न रह जाये
इसलिए ले लेना है हर ऐसे आदमी को
हमें अपनी पीठ पर जो खुद चढ़ नहीं सकता
क्योंकि एक को भी पीछे छोड़कर देश आगे नहीं बढ़ सकता"[117]

समाज में भेदभाव का मूल कारण शोषण है जिसने समाज को वर्गों में विभाजित कर दिया है। जब तक समाज से शोषण का खात्मा नहीं होता समाज में समता की स्थापना नहीं हो सकती। शोषण सर्वोदय के राह की सबसे बड़ी बाधा है। शोषणकर्त्ता समाज के निम्न वर्गों के शोषण की नित नई तरकीबें निकालता है। सर्वोदय के राह की रुकावट ऐसे शोषणकर्त्ताओं की तुलना राहु के सिर से करते हुए कवि कहते हैं –

"तुम्हारे पास राहु की तरह सिर्फ सिर है
और बहुत बड़ा मुँह है तुम्हारे उस सिर में
सब कुछ तुम अपने मुँह में रख लेना चाहते हो
धड़ तो तुमने काम-धाम करने वालों को दे रखा है

काम वे करें और सिर न होने से
सोच न पायें अपनी हालत
और तुम सिर्फ सिर-ही-सिर रहो
नित नयी तरकीबें मन की चीजों को
निगलने को निकाल लो"[118]

महात्मा गांधी की भाँति भवानीप्रसाद मिश्र भी समाज से शोषण को खत्म कर जन साधारण को उनका अधिकार दिलाने के आकांक्षी थे। उन्हें महसूस होता है कि वे अपनी लेखनी के बल पर समाज के लाचार लोगों पर जुल्म ढाने वाले चालाक लोगों के खिलाफ आवाज उठायेंगे। परन्तु शोषणकर्त्ता की स्थिति समाज में इतनी सुदृढ़ है कि वे लेखनी से जरा भी विचलित नहीं होते। पर इससे भवानीप्रसाद मिश्र की आशा कम नहीं होती और वे लगातार शोषणकर्त्ता और शोषित को अपने काव्य का विषय बनाते हैं –

"कुछ भी तो नहीं कर सकते तुम
उन चालाक लोगों के खिलाफ
जो लाचार लोगों पर गजब ढा रहे हैं
x x x x
जरा भी विचलित नहीं करेंगे उनको
जो लाचारों को पीस रहे हैं
और न ताकत दे पायेंगे उन्हें
जो चुपचाप पिस रहे हैं
तो भी न जाने किस आशा से
मिश्रजी कलम घिस रहे हैं"[119]

भवानीप्रसाद मिश्र को अपनी कविता पर पूर्ण विश्वास है। उनका मानना है कि महात्मा गांधी ने सर्वोदय के स्वप्न को वास्तविकता में परिणत करने में कविता महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसलिए वे अत्यन्त विश्वास से कहते हैं कि आज निर्बल पर अत्याचार करने वाला कल मुँह के बल अवश्य गिरेगा और समाज में लाचार लोगों की स्थिति बदलेगी। यथा –

"कैसे सह सकते हो तुम कि आज के अत्याचारी
कल मुँह के बल नहीं गिरेंगे
लाचार लोगों के दिन कभी नहीं फिरेंगे"[120]

निष्कर्षतः महात्मा गांधी का सर्वोदय सिद्धान्त समाज के समस्त प्राणियों की उन्नति का मार्ग है। मानवकृत विषमता का अंत सर्वोदय का उद्देश्य है। इसके माध्यम से महात्मा गांधी समाज में स्पर्धा की जगह स्नेह और शोषण की जगह सहयोग की भावना का विकास करना चाहते थे। गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र सत्य और अहिंसा की राह पर चलते हुए महात्मा गांधी के सर्वोदय की किरण को स्नेह के बल पर धरती पर फैलाने की बात अपनी कविता में करते हैं। पर सर्वोदय की स्थापना लिए समानता का अधिकार आवश्यक है। संसार में सर्वोदय तभी लहरा सकता है, जब समाज से शोषण और अत्याचार का खात्मा हो। समाज में लगातार बढ़ती अधिकारलिप्सा और शोषण की प्रवृत्ति के चलते महात्मा गांधी का सर्वोदय महज एक सिद्धान्त बनकर रह गया। वर्गभेद लगातार बढ़ता जा रहा है। समाज की इस विडम्बनापूर्ण स्थिति को देखकर सर्वोदयी कवि भवानीप्रसाद मिश्र दुःखी हैं। परन्तु वे निराश नहीं है। उन्हें आशा है कि आज नहीं तो कल महात्मा गांधी के सर्वोदय का स्वप्न वास्तविकता में परिणत होगा और समाज की स्थिति बदलेगी।

(च) पंचायती राज :

भारत गाँवों का देश है। गाँवों के विकास से ही भारत का विकास संभव है और गाँव को तभी विकसित कहा जा सकता है जब भारत का हर एक गाँव अपने पैरों पर खड़ा होकर अपनी जरूरतें स्वयं पूरी करने में सक्षम हो। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए महात्मा गांधी ने प्राचीन काल में प्रचलित पंचायत राज में अहिंसा का आदर्श जोड़कर उसे नवीन रूप दिया। केन्द्रीकरण को समस्त बुराइयों का मूल मानकर महात्मा गांधी ने विकेन्द्रीकरण पर बल दिया। वे चाहते थे कि ग्राम पंचायतों को ग्रामों के प्रबन्ध और प्रशासन के समस्त अधिकार प्रदान किए जाएँ। गाँवों से सम्बन्धित किसी भी मामले में प्रान्तीय या राष्ट्रीय सरकार की दखलंदाजी कम-से-कम हो। इस पंचायत राज में पंचायत की आज्ञा सर्वोपरि होगी और पंचायत स्वनिर्मित कानून के अनुसार ही अपना कार्य करेगी। पंचायत के संगठन एवं स्वरूप को स्पष्ट करते हुए उन्होंने लिखा है – "गाँव का शासन चलाने के लिए हर गाँव के पाँच आदमियों की एक पंचायत चुनी जायेगी। इन पंचायतों को सब प्रकार की आवश्यक सत्ता और अधिकार रहेंगे। यह पंचायत अपने एक साल के कार्यक्रम में स्वयं ही धारा सभा, न्याय सभा और कार्यकारिणी सभा का सारा काम संयुक्त रूप से करेगी।"[121] अर्थात् ग्राम पंचायतें स्वायतशासी निकाय होंगी जिन्हें स्थानीय प्रबन्ध में व्यवस्थापन, अधिशासन तथा न्याय सम्बन्धी शासन के सभी अधिकार प्राप्त होंगे। सहकारी पद्धति पर आधारित इस व्यवस्था में प्रत्येक गाँव आत्मनिर्भर, स्वावलम्बी और स्वतन्त्र होगा।

महात्मा गांधी द्वारा प्रस्तावित इस व्यवस्था में धार्मिक और आर्थिक स्तर पर सबको समान अधिकार प्रदान करने की बात कही गई है। यह एक ऐसी आदर्श व्यवस्था है जिसमें

प्रथम और अंतिम व्यक्ति बराबर है, अर्थात् न कोई पहला है और न कोई आखिरी। अगर यह व्यवस्था लागू हो तो लोकमत के बल पर अनेक ऐसे काम किए जा सकते हैं जो हिंसा के बल पर असंभव है।

महात्मा गांधी ने अपने विचारों के माध्यम से गाँवों के सर्वांगीण विकास के लिए जिस पंचायत राज की चर्चा की है, वास्तविकता के धरातल पर वह कहीं दिखाई नहीं देता। हालाँकि सन् 1959 में भारत में पंचायती राज व्यवस्था की शुरूआत हुई पर गांधी के पंचायती राज और देश में लागू पंचायत राज में कहीं कोई मेल नहीं था। किसी भी कवि की कविता युगीन परिस्थितियों की उपज होती है। जब देश में गांधी विचारधारा के अनुरूप पंचायतराज व्यवस्था लागू ही नहीं हुई तो काव्य में उसकी अभिव्यक्ति की कोई सम्भावना शेष नहीं रह जाती। यही कारण है कि गांधी विचारदर्शन का कविता में कायांतरण करने वाले भवानीप्रसाद मिश्र की कविताओं में पंचायत राज का वर्णन देखने को नहीं मिलता। भवानीप्रसाद मिश्र स्वातंत्र्योत्तर भारतीय राजनीति की गांधी के सपनों के विरुद्ध जाती प्रवृत्ति के कारण दुःखी हैं। हिन्दी के अन्य कवि जहाँ सम्पूर्ण व्यवस्था से ही असंतुष्ट थे वहीं भारत के विकास के गँवई गांधीवादी अवधारणा के स्वप्नद्रष्टा भवानीप्रसाद मिश्र गांधी के सपनों अर्थात् एक सीधे-सादे मूल्यचेता भारत के न बनने की नियति से दुःखी हैं।

महात्मा गांधी के पंचायत राज की अवधारणा का मूल उद्देश्य गाँवों में रहने वाले कृषकों एवं मजदूरों को शोषण से मुक्ति दिलाकर उन्हें जीवन की मूलभूत सुविधाएँ उपलब्ध कराना था। परन्तु स्वतंत्रता के पश्चात् गांधीजी का यह स्वप्न महज स्वप्न बन कर रह गया। पंचायत राज के तहत महात्मा गांधी जिस अंतिम व्यक्ति को अपने पैरों पर खड़ा करने की बात करते हैं, आज उस व्यक्ति की दुर्दशा को देखकर कलेजा मुँह को आ जाता है। देश के नेताओं का सारा ध्यान दिल्ली, बम्बई और कलकत्ता जैसे महानगरों के विकास में लगा है और जिन गाँवों के विकास की आवश्यकता है उनका शोषण हो रहा है। केन्द्र और राज्य सरकारें गाँव के पैसों से अपनी तिजोरी तो भर लेती है, पर विकास की उनकी योजनाओं में गाँवों का कहीं कोई जिक्र नहीं होता। गाँवों के पैसों से शहरों की बड़ी-बड़ी अट्टालिकाओं में कृषि भवन का कार्यालय बनता है जिसमें कृषि का विकास कम मिट्टी पलीत ज्यादा होती है। गांधी के पंचायती राज का स्वप्न देखने वाले गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र का हृदय गाँवों की इस स्थिति को देखकर व्यथित है। उनके हृदय की यही व्यथा 'अब क्या करूँ' शीर्षक कविता में स्पष्ट देखी जा सकती है -

"सजाते रहना दिल्ली को बम्बई को कलकत्ते को
लखनऊ को चंडीगढ़ को, मदरास को मैसूर को
भूलकर उन गाँवों को जहाँ का पैसा आता है

केन्द्र और राज्यों की तिजोरियों में"[122]

पंचायती राज के तहत गांधीजी ने ऐसे ग्राम की कल्पना की है जहाँ व्यक्ति को अपनी जरूरतों के लिए किसी पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक गाँव को आत्मनिर्भर बनाने की बात करते हुए उन्होंने लिखा है – "प्रत्येक गाँव को एक स्वावलम्बी गणतंत्र बनना होगा। इसके लिए लम्बे चौड़े प्रस्ताव पास करने की जरूरत नहीं है।"[123] अर्थात् महात्मा गांधी पंचायत राज व्यवस्था के तहत गाँव के प्रत्येक व्यक्ति को रोजगार प्रदान कर आत्मनिर्भर बनाना चाहते थे। वे चाहते थे कि गाँव का प्रत्येक व्यक्ति अपनी जरूरत के लिए अनाज और कपड़े के लिए कपास खुद पैदा करे। इसके बाद अपनी बची हुई जमीन पर उपयोगी फसल और पशुपालन कर अतिरिक्त आर्थिक लाभ उठा सकते हैं। ऐसा करने पर एक ओर तो उन्हें बेरोजगारी से मुक्ति मिलेगी तथा दूसरी ओर उनके जीवन में समृद्धि आयेगी। पर हमारे देश के गाँवों की स्थिति ठीक इसके विपरीत है। गाँवों में रहने वाले किसानों के पास अपनी जमीन नहीं है। जिनके पास थोड़ी बहुत जमीन है उनके पास खेती करने के लिए साधन नहीं है। ऐसी स्थिति में ऋण लेकर खेती करते हुए वे लगातार शोषण का शिकार हो रहे हैं। शोषण की चक्की में पिसते हुए ग्राम जीवन की कठिनाइयों से परेशान होकर हमारे किसान शहरों की ओर पलायन करते हैं और वहाँ मेहनत मजदूरी कर अपना जीवन यापन करते हैं। मेहनत करने के लिए हाथ उनके पास मौजूद है पर हमारे गाँवों की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं है कि हर हाथ को काम मिल सके। जिस पंचायत राज के सहारे महात्मा गांधी ने गाँवों की खुशहाली और समृद्धि का स्वप्न देखा, उन स्वप्नों को टूटकर बिखरते देख गांधी विचारधारा के कवि भवानीप्रसाद मिश्र अपना दुःख प्रकट करते हुए कहते हैं –

"हाथ आज भी उनके पास है मगर गाँवों में आबरू की
रोटी नहीं दे सकते वे उन्हें शहर में तो वे आबरू को भूलकर
जी सकने की सुविधा समझकर ही आये थे"[124]

यद्यपि गाँवों और गाँव में रहने वाले मजदूर और किसानों की दुर्दशा देखकर भवानीप्रसाद मिश्र का हृदय आहत है, पर गांधी विचार दर्शन में अपनी अटूट आस्था के चलते कवि निराशावादी नहीं है। उन्हें आशा है कि आज नहीं तो कल बापू के पंचायती राज का सपना साकार होगा और गाँवों में ग्राम पंचायते बनेगी। पंचायतों के माध्यम से गाँव की समस्याओं का समाधान होगा। पर यह तभी संभव है जब हम गांधी और गांधी दर्शन को समझें। उसे अपने जीवन में अपनायें। गांधी और गांधी दर्शन से दूर रहकर कदापि कुछ नहीं होगा –

"देश की समस्याओं का हल – गांधी दर्शन
और होगा वह गांधी को समझने से
उसके रहने और करने के ढंग को अपनाने से
उससे हटकर कदापि नहीं कुछ होगा
जो कुछ होगा सो होगा उसके पास जाने से"[125]

भवानीप्रसाद मिश्र ने गांधी विचारदर्शन को अपने जीवन में उतारा था। महात्मा गांधी की भावनाएँ उनकी अपनी भावना बन गई। यही कारण है कि केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा गाँवों का शोषण उन्हें अखरने लगा। उनका मानना था कि गाँवों में स्वराज तभी आ सकता है जब सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो और गाँवों में पंचायती राज की स्थापना कर गाँवों के भाग्य निर्माण का कार्य गाँव पंचायतों को सौंप दिया जाय। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में पंचायती राज व्यवस्था लागू तो हुई पर उसका स्वरूप महात्मा गांधी के पंचायती राज व्यवस्था से भिन्न था। यह देखकर कवि भवानीप्रसाद मिश्र का हृदय क्षोभ से भर उठा। गांधी के अनुयायी होने के कारण गाँवों को उपेक्षित और प्रताड़ित करने वाली केन्द्रीय और राज्य सरकारों के प्रति आक्रोश और पंचायती राज व्यवस्था के लागू होने का दृढ़ विश्वास उनकी 'नहीं बदला नहीं है मेरा देश' शीर्षक कविता में स्पष्ट झलकता है –

"तुम्हारा सिंहासन हमें नहीं चाहिए
वह तो हम उठाकर अजायबघर में
धर देंगे – तुम्हें शायद मालुम है हमारा इरादा
हम इस विशाल और बड़े देश के
हर छोटे-से-छोटे गाँव में ले जाकर स्वराज धर देंगे।"[126]

महात्मा गांधी के पंचायती राज की अवधारणा में मानव श्रम को विस्थापित कर मुट्ठी भर लोगों में शक्ति का केन्द्रीकरण करने वाले यंत्रों के लिए कोई स्थान नहीं है। पर ऐसा यंत्र या मशीन जो व्यक्ति के काम में सहायक हो उसे स्वीकार किया जा सकता है। उन्होंने स्पष्ट लिखा है – "इस तस्वीर (पंचायत राज) में ऐसी मशीनों के लिए कोई स्थान नहीं है जो मानव श्रम को विस्थापित करती है और मुट्ठी भर लोगों में शक्ति का केन्द्रीकरण करती है।"[127] श्रम की महिमा का बखान और यंत्रों के विरोध के पीछे गांधीजी का मूल उद्देश्य एक ऐसे समाज की स्थापना करना था जिसमें निम्नतम व्यक्ति उच्चतम व्यक्ति से किसी मायने में कम न हो या न कोई उच्चतम हो और न कोई निम्नतम। गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र महात्मा गांधी के अनुरूप पंचायती राज की स्थापना चाहते थे। इसी पंचायती राज के स्थापना हेतु जनता को प्रेरित करने के उद्देश्य से उन्होंने अपनी रचनाओं

में यंत्रों का विरोध और श्रम की महिमा का गुणगान किया है। भवानीप्रसाद मिश्र के अनुसार यंत्र विशेषकर बड़े यंत्र मनुष्य के शोषण के मूल कारण है। इनका प्रयोग श्रमिकों को बेरोजगार बनाता है। इसलिए मनुष्य को जहाँ तक हो सके हाथ से काम करना चाहिए। यदि यंत्रों का प्रयोग करना भी पड़े तो बड़े यंत्रों के स्थान पर चक्की और चरखे जैसे छोटे यंत्रों का प्रयोग करना चाहिए जो मनुष्य को रोजगार प्रदान कर उसकी समृद्धि में सहायक होते हैं –

"बैल बखर चक्की और चरखा

गाँव गली में सुख की बरखा।"[128]

चक्की और चरखा जैसे यंत्र गाँव में रहने वाले लोगों के जीवन में खुशहाली ला सकते हैं इसलिए महात्मा गांधी ने पंचायती राज के तहत गाँवों में बार-बार यंत्रों का कम-से-कम प्रयोग करने का आह्वान किया है। उनका मानना था कि व्यक्ति यंत्रों का विरोध कर श्रम को अपने जीवन में स्थान दे तो उसके जीवन के सारे अभाव समाप्त हो जायेंगे। महात्मा गांधी के इन्हीं विचारों को कविता के माध्यम से अभिव्यक्त करते हुए भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं –

"खून को रगों में काम बनकर दौड़ना आ जाये

तो बेशक बंजर हर इंच धरती पर मधुमास आ जाये"[129]

निष्कर्षतः महात्मा गांधी सत्ता के विकेन्द्रीकरण में विश्वास रखते थे। इसलिए उन्होंने अपनी पंचायती राज की अवधारणा में ग्रामों के प्रबन्ध और प्रशासन के सारे अधिकार पंचायतों को प्रदान करने की बात कही है। महात्मा गांधी गाँवों के सर्वांगीण विकास के लिए पंचायती राज की शुरूआत करना चाहते थे। पर हमारे देश की वर्तमान पंचायत राज व्यवस्था का महात्मा गांधी द्वारा परिभाषित पंचायती राज से कोई मेल नहीं है। गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र गांधी के सपनों के विरुद्ध जाती भारतीय राजनीतिक व्यवस्था से दुःखी हैं। देश के नेता बड़े-बड़े शहरों के विकास में लगे हैं। गाँव के विकास से उनका कोई सरोकार नहीं है। गाँव केन्द्र और राज्य सरकारों के लिए केवल आय का साधन है। जिससे सरकार अपनी तिजोरी तो भर लेती है, पर उनकी विकास की योजना से गाँव नदारद रहते हैं। गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र गाँव की इस स्थिति को देखकर दुःखी हैं, पर गांधी विचारदर्शन में अपनी आस्था के चलते वे निराश और हताश नहीं है। उन्हें विश्वास है कि हमारे देश में बहुत जल्दी गांधीवादी पंचायती राज व्यवस्था लागू होगी और पंचायतों के माध्यम से ही गाँवों की समस्या का समाधान होगा। गाँवों को प्रताड़ित करने वाली केन्द्रीय और राज्य सरकारों के प्रति आक्रोश तथा पंचायती राज व्यवस्था के लागू होने का दृढ़ विश्वास उनकी कविताओं में परिलक्षित होता है।

निष्कर्ष :

भवानीप्रसाद मिश्र की कविताओं में रूढ़ि-विरोध, हरिजनोद्धार, स्वतंत्रता संग्राम में गांधी का नेतृत्व, रामराज्य के आदर्श, सर्वोदय और पंचायती राज के वर्णन में गांधीवादी सामाजिक-राजनीतिक दर्शन उभर कर सामने आया है। महात्मा गांधी स्वयं को कट्टर सनातनी हिन्दू मानते थे। परंतु उनकी धार्मिक भावना रूढ़ियों का विरोध करने वाली थी। उन्होंने छुआछूत, व्रत-उपवास तथा नारी जीवन सम्बन्धी रूढ़ियों का सक्रिय विरोध किया। भवानीप्रसाद मिश्र ने भी महात्मा गांधी की राह पर चलते हुए अपनी कविताओं में धर्म के उपयोगी स्वरूप को चिह्नित करते हुए धर्म एवं समाज में व्याप्त जड़ता तथा रूढ़िवादिता का विरोध किया। महात्मा गांधी ने बाल विवाह, अनमेल विवाह, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा आदि नारी जीवन सम्बन्धी रूढ़ियों के विरुद्ध दृढ़ता से आवाज उठाई। भवानीप्रसाद मिश्र ने भी अपनी कविताओं में दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा आदि के विरोध का स्वर मुखरित किया है। वे महात्मा गांधी के इस विचार से सहमत थे कि भारतीय समाज की दुर्दशा और पराधीनता इन सामाजिक रूढ़ियों के मौन समर्थन का ही परिणाम है। महात्मा गांधी अस्पृश्यता को स्वराज के राह की सबसे बड़ी बाधा मानते थे। समाज में अस्पृश्य कहकर पुकारे जाने वाले लोगों के उद्धार के लिए महात्मा गांधी ने हरिजनोद्धार आंदोलन की शुरूआत की और भवानीप्रसाद मिश्र ने अपनी कविताओं के माध्यम से उक्त आंदोलन के प्रति जनमानस में चेतना जागृत की। कवि भवानीप्रसाद मिश्र तो अंत्यजों के हित के लिए साम्यवाद को भी स्वीकार करने के लिए तैयार थे। उन्होंने स्पष्ट कहा कि यदि प्रगतिवादि आंदोलनों से दलितों को सामाजिक न्याय मिलता है तो उन्हें प्रगतिवाद स्वीकार्य है। महात्मा गांधी ने अपनी विचारधारा से स्वतंत्रता संग्राम को एक नयी दिशा प्रदान की। उन्होंने सत्य और अहिंसा से एक अहिंसक क्रांति का सूत्रपात किया। गांधी दर्शन में अपनी अटूट निष्ठा के चलते भवानीप्रसाद मिश्र ने अपनी कविताओं के माध्यम से देश की जनता को साधनों की पवित्रता का ध्यान रखते हुए अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष का संदेश दिया है। भवानीप्रसाद मिश्र को पूर्ण विश्वास है कि अगर साधन पवित्र हैं तो हमारे हर वो साध्य पूर्ण होंगे जिनके स्वप्न हमने देखे हैं। साधनों की पवित्रता को बनाये रखने के लिए महात्मा गांधी ने सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा को अपना प्रमुख अस्त्र बनाया और भवानीप्रसाद मिश्र ने इन्हें अत्यंत शक्तिशाली बताते हुए अपनी कविताओं के माध्यम से आगे बढ़ाया।

महात्मा गांधी ने नैतिक मूल्यों पर आधारित अहिंसक प्रजातांत्रिक व्यवस्था की कल्पना की और उसे रामराज्य कहकर पुकारा। रामराज्य प्रेम और अहिंसा का वह राज्य है जहाँ किसी के भी हृदय में ईर्ष्या और द्वेष का भाव नहीं है। भवानीप्रसाद मिश्र चाहते हैं कि रामराज्य का यही प्रेम और स्नेह हमारे देश की हर गली और हर घर में देखने को मिले। पर आज प्रेम, अहिंसा, स्नेह आदि मानवीय मूल्यों को दरकिनार कर व्यक्ति अपने स्वार्थों की

पूर्ति में व्यस्त है। महात्मा गांधी के रामराज्य के आदर्श के स्वप्न को इस प्रकार टूटकर बिखरते देखकर कवि भवानीप्रसाद मिश्र दुःखी हैं, पर वे निराश नहीं हैं। उन्हें आशा है कि महात्मा गांधी के रामराज्य के आदर्श समाज में स्थापित होंगे और लोग प्रेम एवं स्नेह जैसे मूल्यों को अपनाकर एक-दूसरे के सुख-दुःख में भागीदार बनेंगे। सर्वोदय समाज के समस्त प्राणियों की उन्नति का मार्ग है। महात्मा गांधी के अनुसार जीवमात्र के लिए समादर और प्रत्येक व्यक्ति के लिए सहानूभूति ही सर्वोदय है। भवानीप्रसाद मिश्र स्नेह के बल पर सर्वोदय की किरण को धरती पर फैलाने की बात अपनी कविता में करते हैं। पर समाज में सर्वोदय की स्थापना तभी हो सकती है जब समाज से शोषण और अत्याचार पूरी तरह से खत्म हो। सर्वोदयी कवि भवानीप्रसाद मिश्र को आशा है कि आज नहीं तो कल महात्मा गांधी के सर्वोदय का स्वप्न वास्तविकता में परिणत होगा और समाज की स्थिति बदलेगी। भारत का हर गाँव अपने पैरों पर खड़ा होकर अपनी जरूरतें स्वयं पूरी करने में सक्षम है। इस उद्देश्य की पूर्ती के लिए महात्मा गांधी ने विकेन्द्रीकरण पर बल दिया। वे ऐसे पंचायती राज की स्थापना करना चाहते थे जिसमें ग्राम पंचायतों को गाँवों के प्रबन्ध और प्रशासन के समस्त अधिकार दिये जाएँ। गांधीवादी कवि भवानीप्रसाद मिश्र महात्मा गांधी के सपनों के विरुद्ध जाती भारतीय राजनीतिक व्यवस्था से दुःखी हैं, जिसका गाँव के विकास से कोई सरोकार नहीं है। महात्मा गांधी के अनुयायी होने के कारण गाँवों को उपेक्षित और प्रताड़ित करनेवाली केंद्रीय और राज्य सरकारों के प्रति आक्रोश और पंचायती राज व्यवस्था के लागू होने का दृढ़ विश्वास भवानीप्रसाद मिश्र की कविताओं में स्पष्ट झलकता है।

XXXX

संदर्भ ग्रंथ सूची :

[1] लक्ष्मण केड़िया (सं), समकालीन सृजन, भवानीप्रसाद मिश्र के आयाम, अंक – 16, कलकत्ता, 1995, पृ. सं. – 233-234

[2] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 2, रूढ़िग्रस्त, पृ. सं. – 8-9।

[3] वही, खण्ड – 2, रूढ़िग्रस्त, पृ. सं. – 9

[4] वही, खण्ड - 1, मधुमास, पृ. सं. - 102

[5] महात्मा गांधी, हरिजन, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद, 28-09-1947, पृ. सं. – 349

[6] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खं – 1, गांधी का सपना, पृ. सं. – 7

[7] वही, खण्ड – 1, गांधी का सपना, पृ. सं. – 81

[8] वही, खण्ड – 3, रूढ़ विगत के घेरे तोड़ो, पृ. सं. – 345

[9] वही, खण्ड – 3, गांधी का दया धर्म, पृ. सं. – 315

[10] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 03-02-1927, पृ. सं. – 9

[11] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 2, प्रजातंत्र, पृ. सं. – 68

[12] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 21-06-1928, पृ. सं. – 12

[13] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 2, हँसती हुई तसवीरें, पृ. सं. – 440-441

[14] वही, खण्ड – 1, अनाम तुम आते हो, पृ. सं. - 131

[15] महात्मा गांधी, मेरे सपनों का भारत, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 2010, पृ सं. – 188

[16] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 2, कठपुतली, पृ. सं. – 237।

[17] किशोरीलाल घ. मशरूवाला, गांधी विचार दोहन, सस्ता साहित्य मंडल, 1967, पृ. सं. – 155

[18] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 3, अहिंसा-स्नेह शक्ति, पृ. सं. – 356।

[19] वही, खण्ड – 1, तरूण तत्व, पृ. सं. – 317

[20] वही, खण्ड – 5, साँचे जो विचार, पृ. सं. – 100

[21] वही, खण्ड – 7, ज्वलंत शब्द, पृ. सं. – 90

[22] वही, खण्ड – 1, कोकिल, पृ. सं. – 187

[23] वही, खण्ड – 1, नववर्ष, पृ. सं. – 42

[24] वही, खण्ड – 1, नये गीत, पृ. सं. – 144

[25] वही, खण्ड – 3, गांधी का दया धर्म, पृ. सं. – 315

[26] वही, खण्ड – 2, रूढ़ीग्रस्त, पृ. सं. – 8-9

[27] वही, खण्ड – 1, तमिस्रा की ताड़का, पृ. सं. - 12

[28] वहा, खण्ड – 3, विचार कण, पृ. सं. – 369

[29] वही, खण्ड – 1, गांधी का सपना, पृ. सं. – 8

[30] महात्मा गांधी, मेरे सपनों का भारत, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 2010, पृ. सं. – 212

[31] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 04-05-1921, पृ सं. – 144

[32] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 1, गांधी का सपना, पृ. सं. – 8।

[33] वही, खण्ड – 1, साम्यवादी मित्र से, पृ. सं. – 326

[34] वही, खण्ड – 7, जिन्दा दर्पण, पृ. सं. – 320

[35] वही, खण्ड – 1, भूमिका, पृ सं. – xx

[36] वही, खण्ड – 7, श्रम की महिमा, पृ सं. – 316

[37] वही, खण्ड – 7, एक पैसा और गांधी, पृ सं. – 223-224

[38] वही, खण्ड – 1, गांधी का सपना, पृ. सं. – 8

[39] वही, खण्ड – 1, संग्राम साथियों को जेल से विदा देते हुए, पृ. सं. – 160

[40] वही, खण्ड – 1, महामानव, पृ. सं. – 89-90

[41] वही, खण्ड – 2, गीत, पृ. सं. – 448

[42] महात्मा गांधी, हरिजन, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद, 01-02-1942, पृ. सं. – 27

[43] महात्मा गांधी, हरिजन, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद, 05-05-1946, पृ. सं. – 116

[44] डॉ. नगेन्द्र, आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ, गौतम बुक डिपो, दिल्ली, 1951, पृ. सं. – 32

[45] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड - 1, संग्राम साथियों को जेल से बिदा देते हुए, पृ. सं. - 161

[46] महात्मा गांधी, हरिजन, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद, 01-02-1942, पृ. सं. – 27

[47] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड - 1, तुम्हारे शब्द, पृ. सं. - 270

[48] वही, खण्ड - 1, साम्यवादी मित्र से, पृ. सं. - 325

[49] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 04-07-1929, पृ. सं. – 218

[50] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड - 1, ऊँचा करके शीश चलो, पृ. सं. - 2

[51] वही, खण्ड - 1, अकेले तुम, पृ. सं. - 36

[52] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 11-10-1928, पृ. सं. – 342

[53] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 3, अहिंसा-स्नेह शक्ति, पृ. सं. – 354

[54] वही, खण्ड - 3, अहिंसा-स्नेह शक्ति, पृ. सं. - 359

[55] महात्मा गांधी, सर्वोदय,नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 2011, पृ. सं. – 6

[56] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खम्ड - 7, वह यात्रा, पृ. सं. – 309

[57] वही, खण्ड - 1, संघर्ष सम्भावना, पृ. सं. - 93

[58] वही, खण्ड - 1, कुछ बात करें, पृ. सं. - 152

[59] वही, खण्ड – 1, कुछ बात करें, पृ. सं. - 153

[60] वही, खण्ड - 5, मेरे देश, पृ. सं. - 333

[61] वही, खण्ड - 6, साधन सोचो, पृ. सं. - 91

[62] वही, खण्ड – 1, साम्यवादी मित्र से, पृ. सं. – 327

[63] वही, खण्ड - 1, बीज का विकास, पृ. सं. - 91

[64] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 10-11-1921, पृ. सं. – 362

[65] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 3, अहिंसा-स्नेह शक्ति, पृ. सं. – 358

[66] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 10-11-1921, पृ. सं. – 362

[67] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 3, अहिंसा-स्नेह शक्ति, पृ. सं. – 355

[68] वही, खण्ड – 3, अहिंसा-स्नेह शक्ति, पृ. सं.- 335

[69] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 10-11-1921, पृ. सं. – 362

[70] स्पीचेज एंड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी, जी. ए. नटेसन एंड कं., मद्रास, 1993, चतुर्थ संस्करण, पृ. सं. – 165

[71] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड - 3, अहिंसा-स्नेह-शक्ति, पृष्ठ संख्या – 358

[72] डब्ल्यू पी. कबाड़ी (सं), इंडियास केस फोर स्वराज, येशानंद एंड कं., बंबई, 1932, पृ. सं. – 209

[73] महात्मा गांधी, हरिजन, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद, 24-02-1946, पृ. सं. – 18

[74] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 7, विरोध करने की घड़ी में, पृ. सं. – 37

[75] वही, खण्ड – 2, प्रश्नोत्तर, पृ. सं. – 139

[76] वही, खण्ड – 1, कुछ बात करें, पृ. सं. – 152

[77] वही, खण्ड – 1, अंधकार में, पृ. सं. – 83

[78] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 24-03-1920, पृ. सं. – 4

[79] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 5, मतभेद, पृ. सं. – 98

[80] वही, खण्ड – 1, संग्राम साथियों को जेल से विदा देते हुए, पृ. सं. – 160

[81] वही, खण्ड -1, संग्राम साथियों को जेल से विदा देते हुए, पृ. सं. - 160

[82] वही, खण्ड – 3, लोग थक जाते हैं, पृ. सं. – 353

[83] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 15-12-1921, पृ. सं. – 419

[84] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 1, संग्राम साथियों को जेल से विदा देते हुए, पृ. सं. – 160

[85] हरिभाऊ उपाध्याय, गांधीवाद : समाजवाद, शिवलाल अग्रवाल एंड कं. प्रा. लि., आगरा, 1972, पृ. सं. – 64

[86] अमृत बाजार पत्रिका, कलकत्ता से प्रकाशित हिन्दी दैनिक, 02-08-1934

[87] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 19-09-1929, पृ. सं. – 305

[88] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 3, विचार कण, पृ. सं. – 397

[89] वही, खण्ड – 3, अहिंसा-स्नेह शक्ति, पृ. सं. – 357

[90] वही, खण्ड – 2, हम, पृ. सं. – 173

[91] वही, खण्ड – 2, हम, पृ. सं. – 457

[92] महात्मा गांधी, मेरे सपनों का भारत, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 2010, पृ. सं. – 20

[93] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 5, लोग जो नहीं चाहते, पृ. सं. – 113

[94] वही, खण्ड – 4, कैसा मजा है, पृ. सं. – 453

[95] वही, खण्ड – 8, चार कौए उर्फ चार हौए , पृ. सं. – 114

[96] वही, खण्ड – 3, हिम्मत नहीं पड़ती, पृ. सं. – 124

[97] वही, खण्ड – 2, अब क्या करूँ, पृ. सं. – 408

[98] वही, खण्ड – 3, कंबंधों के बावजूद, पृ. सं. – 197

[99] वही, खण्ड – 2, रोना इसी का है, पृ. सं. – 369

[100] वही, खण्ड – 1, सामूहिक, पृ. सं. – 267

[101] वही, खण्ड – 2, सहयोगी, पृ. सं. – 113

[102] महात्मा गांधी, यंग इंडिया, अहमदाबाद, 04-12-1926, पृ. सं. – 398

[103] महात्मा गांधी, हरिजन, हरिजन सेवक ट्रस्ट, पूना, 27-01-1940, पृ. सं. – 428

[104] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 3, दो तिथियाँ, पृ. सं. – 65

[105] वही, खण्ड – 7, वह यात्रा, पृ. सं. – 307

[106] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 1, मंत्रियों का स्वागत, पृ. सं. – 39।

[107] वही, खण्ड – 1, मंत्रियों का स्वागत, पृ. सं. - 39

[108] वही, खण्ड – 1, गाँव, पृ. सं. – 40

[109] वही, खण्ड – 7, बिनोबा, पृ. सं. – 342

[110] महात्मा गांधी, सर्वोदय, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 2011, पृ सं. – 80

[111] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 1, घायलों का परब, पृ. सं. – 329

[112] वही, खण्ड – 6, कालजयी, पृ. सं. – 246

[113] वही, खण्ड – 6, ये वो लोग हैं, पृ. सं. – 22

[114] वही, खण्ड – 4, त्योहारों पर ही सही, पृ. सं. – 208

[115] वही, खण्ड – 4, आज की घड़ी में, पृ. सं. – 207

[116] आर. के. प्रभु, यु. आर. राव (सं), महात्मा गांधी के विचार, नेशनल बुक ट्रस्ट, 2005, पृ. सं. – 237

[117] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 3, कबंधों के बावजूद, पृ. सं. - 197

[118] वही, खण्ड – 4, जो तुम लिखते बोलते हो, पृ. सं. – 327

[119] वही, खण्ड – 4, कविताएँ बहुत है, पृ. सं. – 339

[120] वही, खण्ड – 4, कविताएँ बहुत हैं, पृ. सं. – 341

[121] महात्मा गांधी, मेरे सपनों का भारत, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 2010, पृ. सं. - 84

[122] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 2, अब क्या करूँ, पृ. सं. – 409।

[123] महात्मा गांधी, हरिजन, हरिजन सेवक ट्रस्ट, पूना, 18-01-1922, पृ. सं. – 4

[124] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 4, झुकी हुई सी पहाड़ी पर, पृ. सं. – 347

[125] वही, खण्ड – 3, प्रारम्भिक, पृ. सं. – 330

[126] वही, खण्ड – 5, नहीं बदला नहीं है मेरा देश, पृ. सं. – 51

[127] महात्मा गांधी, हरिजन, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद, 28-07-1946, पृ. सं. – 236

[128] विजय बहादुर सिंह (सं) भवानीप्रसाद मिश्र रचनावली, अनामिका पब्लि. एंड डिस्ट्री., 2002, खण्ड – 7, जयहिन्द, पृ. सं. – 360

[129] वही, खण्ड – 2, वक्त और जिन्दगी, पृ. सं. – 180

xxxx